संस्कृति मंत्रालय
MINISTRY OF CULTURE
सत्यमेव जयते

राजभाषा मंजूषा

अंक 31 वर्ष 2026
अर्द्धवार्षिक

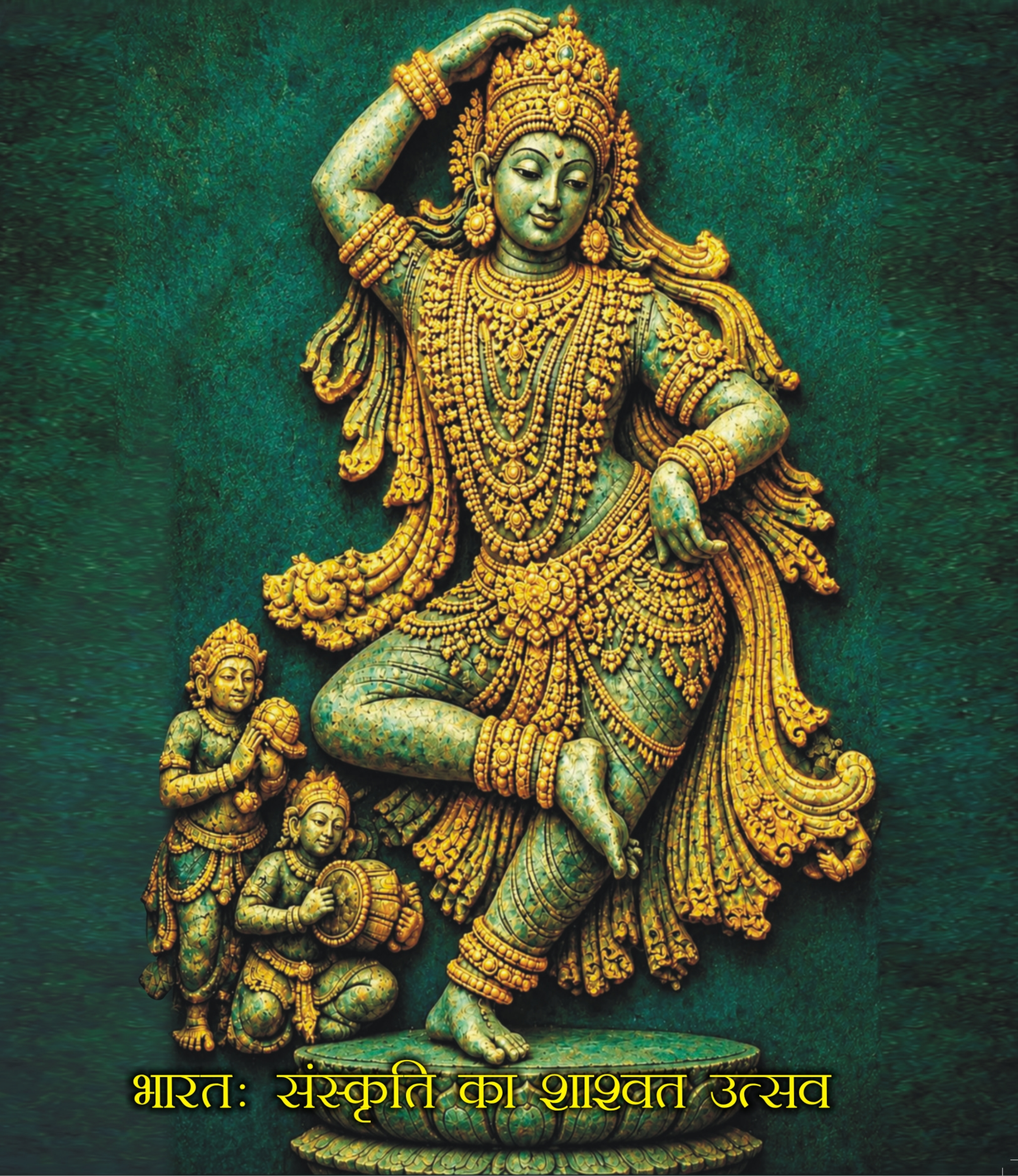

भारतः संस्कृति का शाश्वत उत्सव

सातों महाद्वीपों पर हिंदी रंगमंच-अंटार्कटिका में मंचित हुआ 'गीता का सार'

भारत रंग महोत्सव 2026 के अंतर्गत राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय ने इतिहास रचते हुए **अंटार्कटिका** में भारत की ओर से पहली बार नाट्य प्रस्तुति का आयोजन किया। इस ऐतिहासिक पहल के माध्यम से एनएसडी ने रंगमंच और श्रीमद्भगवद्गीता के दार्शनिक संदेश को सातवें महाद्वीप तक पहुँचाया। इसके साथ ही विश्व के सबसे बड़े अंतरर्राष्ट्रीय रंगमंच महोत्सव की सांस्कृतिक पहुँच मानव उपस्थिति के दक्षिणतम छोर तक विस्तारित हुई।

यह नाटक हिंदी भाषा में प्रस्तुत किया गया। अंटार्कटिका की बर्फीली धरती पर गूँजी वंदे मातरम् की स्वर लहरियाँ और गीता का दिव्य संदेश पहुँचा विश्व के सातवें महाद्वीप तक "ESSO — National Centre for Polar and Ocean Research के मैत्री अंटार्कटिका स्टेशन पर–12 डिग्री तापमान में वहां के वैज्ञानिकों ने इसे प्रस्तुत किया। इस अद्वितीय प्रस्तुति में वैज्ञानिकों ने ही निभाईं भगवान श्रीकृष्ण और अर्जुन की भूमिकाएँ।" "मंचन के उपरांत पोलर यूनिफॉर्म में सुसज्जित सभी भारतीय वैज्ञानिकों ने एक स्वर में गाया–वंदे मातरम्... बर्फ से ढकी धरती पर जब गूँजी भारत माता की वंदना –तो वह दृश्य रोमांच और गौरव से भर देने वाला बन गया। यह केवल एक नाट्य प्रस्तुति नहीं–बल्कि भारतीय संस्कृति, गीता–ज्ञान और हिंदी रंगमंच का वैश्विक विस्तार है। अब हिंदी रंगमंच सातों महाद्वीपों पर अपनी उपस्थिति दर्ज करा चुका है।"

यह अभूतपूर्व सांस्कृतिक क्षण राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की एक गौरवपूर्ण उपलब्धि है। यह भारत की उस सांस्कृतिक और सभ्यतागत प्रतिबद्धता को अभिव्यक्त करता है, जिसके अंतर्गत देश अपनी कला, आध्यात्मिकता और रंगपरंपरा को सीमाओं से परे विश्वभर तक पहुँचाने के लिए निरंतर प्रयत्नशील है। यह पहल इस सत्य को भी स्थापित करती है कि "रंगमंच किसी एक भूगोल का विषय नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता की साझा चेतना की अभिव्यक्ति है।" अंटार्कटिका तक पहुँचा गीता का संदेश एक बार फिर सिद्ध करता है–**'सपने वो नहीं जो सोते समय देखे जाएँ सपने वो हैं जो हमें सोने न दें।'**

अनुक्रमणिका

संपादन परामर्श मंडल
प्रो. भरत गुप्त
श्री चित्तरंजन त्रिपाठी

प्रधान संपादक
प्रदीप कुमार मोहन्ती

संपादक
चेतना वशिष्ठ

सह–संपादन
उपासना शर्मा

कार्यालय सहयोग
कविता मिश्रा
कमल नैन चोपड़ा

आकल्पन एवं कला पक्ष
चेतना वशिष्ठ

टाईप सैट डिज़ाईन एवं छपाई
पोहोजा प्रिंट सोल्यूशंस प्रा. लि., दिल्ली

प्रकाशक
राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय

संपादक कार्यालय
राजभाषा विभाग, बहावलपुर हाउस,
भगवानदास रोड,
नई दिल्ली–110001

ई–मेलः rajbhasha.nsd@gmail.com

1. भाषा और संस्कृति – डॉ. विमलेश कान्ति वर्मा 8
2. संस्कृति सबकी एक चिरंतन, कोटि–हृदय का भाव एक हो – डॉ. कन्हैया झा 12
3. सत्यमेव जयतेः भारतीय संस्कृति एवं जीवन–दर्शन का शाश्वत मन्त्र – डॉ. कंचन बाला 15
4. भारत–सदियों से मन में रचा बसा – श्री पीयूष श्रीवास्तव 17
5. गाँव की माटी में बसा भारत – श्री बुद्धिसागर मिश्रा 20
6. भारतीय ज्ञान परंपराः विश्व को मानवता की दिशा देने वाली अमूल्य धरोहर – श्री ओमप्रकाश सागर 25
7. प्रकृति और संस्कृति का सुरम्य संगमः सिक्किम –प्रो. (डॉ.) अजय कुमार मिश्रा 28
8. प्राचीन भारतीय कलाएँः विरासत का दिव्य स्वर – श्री धर्मवीर 31
9. वृक्ष पूजाः प्रकृति, आस्था और जीवन का अद्भुत समन्वय – सुश्री दीपा जोशी 33
10. सोन चिरिया – श्री सत्यम कुशवाहा 36
11. इतिहास, संस्कृति और भावनाओं का प्रतिबिंबः भारतीय साहित्य – श्री अमित कुमार 39
12. त्योहारों का उत्सवः भारतीयता का रंगीन स्वरुप – सुश्री इंदु बिष्ट 41
13. गहनों में झलकती भारतीयता – सुश्री कविता मिश्रा 42

अनुक्रमणिका

14. ठुमरी सम्राट की कलात्मक विरासत – डॉ. सत्यप्रिय पाण्डेय 48

15. मिट्टी की खुशबू से संस्कारों तक – सुश्री चेतना वशिष्ठ 52

16. दिल्ली से मॉस्को तकः GITIS थियेटर फ़ेस्टिवल की हमारी यात्रा – श्री निलय दे 56

17. शौर्य का प्रथम सूर्योदय – श्री बिजेन्द्र सिंह चौहान 59

18. सुदर्शन चक्रः दिव्य शक्ति और न्याय का प्रतीक 60

19. कुछ क़लम से कुछ कैमरे से 61

20. राजभाषा गतिविधियाँ 64

सर्वाधिकार सुरक्षित

प्रकाशित सामग्री के उपयोग के लिए लेखक, अनुवादक एवं राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की स्वीकृति आवश्यक है। रचनाओं की रीति–नीति या विचारों से राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय, संपादक मंडल या संपादक की सहमति अनिवार्य नहीं है और न ही वे उसके लिए ज़िम्मेदार हैं। यह अंक मार्च 2026 का है।

'राजभाषा मंजूषा' राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय की राजभाषा पत्रिका है।

स्रोत एवं साभार :

newindianexpress.com, in.pinterest.com, lifeispreciousnotrance.blogspot.com, www.google.co.in, M.facebook.com, Indian_classical_culture.

शुभकामना संदेश

भारत की सांस्कृतिक परंपरा कला, संगीत, नृत्य और स्थापत्य की अद्भुत विरासत से समृद्ध रही है। हमारे शास्त्रीय संगीत की मधुरता, नृत्य की भावपूर्ण अभिव्यक्ति, मंदिर स्थापत्य की भव्यता और ललित कलाओं की सूक्ष्मता भारतीय सभ्यता की महानता को दर्शाती है।

प्राचीन भारतीय कला केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं थी, बल्कि जीवन और आध्यात्मिकता को जोड़ने वाली साधना थी। संगीत को "नाद ब्रह्म" कहा गया, नृत्य को देव आराधना का माध्यम माना गया और स्थापत्य को संस्कृति की स्थायी अभिव्यक्ति के रूप में विकसित किया गया। अजंता–एलोरा की गुफाएँ, खजुराहो के मंदिर और भरतनाट्यम, कथक तथा ओडिसी जैसे नृत्य–रूप आज भी हमारी सांस्कृतिक चेतना को जीवित रखते हैं।

आज वैश्वीकरण के दौर में हमारी पारंपरिक कलाओं और सांस्कृतिक धरोहरों को संरक्षित करना अत्यंत आवश्यक है। यदि नई पीढ़ी अपनी कला और संस्कृति से जुड़ी रहेगी, तभी हमारी सांस्कृतिक पहचान सुरक्षित रह सकेगी।

भारतीय संस्कृति की यह विरासत केवल भारत की नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता की अमूल्य धरोहर है। हमें गर्व के साथ इसे आगे बढ़ाना चाहिए और आने वाली पीढ़ियों तक इसकी महत्ता पहुँचानी चाहिए।

इस अंक के लिए राजभाषा विभाग को मैं अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

भरत गुप्त
(उपाध्यक्ष, एन.एस.डी. सोसायटी)

संदेश

'राजभाषा मंजूषा' के आगामी 31वें अंक को आप सभी सुधि पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते हुए अत्यंत हर्ष का अनुभव हो रहा है।

आज का युग भौतिक प्रगति, विज्ञान और तकनीकी विकास का युग है। मानव जीवन सुविधाओं से समृद्ध हुआ है, किंतु इसके साथ तनाव, संवेदनहीनता और सामाजिक विघटन जैसी चुनौतियाँ भी निरंतर बढ़ती जा रही हैं। ऐसे परिवेश में भारतीय संस्कृति के शाश्वत मूल्य हमें संतुलित, शांतिपूर्ण और नैतिक जीवन जीने की दिशा प्रदान करते हैं।

भारतीय संस्कृति सदैव सत्य, करुणा, सहिष्णुता, नैतिकता और मानवीय संवेदनाओं पर आधारित रही है। यदि व्यक्ति और समाज इन मूल्यों को अपने जीवन में आत्मसात करें, तो अनेक सामाजिक समस्याओं का समाधान स्वतः संभव हो सकता है। परिवारों में प्रेम और संस्कार, समाज में विश्वास और सौहार्द तथा राष्ट्र में एकता और समरसता तभी सुदृढ़ हो सकती है, जब हम अपनी सांस्कृतिक चेतना और जीवन–मूल्यों को व्यवहार में स्थान दें।

आज आवश्यकता इस बात की है कि नई पीढ़ी भारतीय संस्कृति, साहित्य, कला और ज्ञान–परंपरा से प्रेरणा ग्रहण करे तथा आधुनिक जीवन में नैतिकता, मानवीय संवेदनाओं और सामाजिक उत्तरदायित्व को अपनाए। यही भारत की वास्तविक शक्ति है और यही हमारी सांस्कृतिक अस्मिता एवं गौरवशाली पहचान का आधार भी।

'राजभाषा मंजूषा' के इस विशेष अंक के प्रकाशन हेतु राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के राजभाषा विभाग को हार्दिक बधाई एवं शुभकामनाएँ। आशा है कि यह अंक पाठकों के लिए ज्ञानवर्धक, प्रेरणास्पद और चिंतनशील सिद्ध होगा।

चि. त्रिपाठी

चित्तरंजन त्रिपाठी

(निदेशक)

अपनी बात

राजभाषा मंजूषा का 31वाँ अंक आपके समक्ष प्रस्तुत है। राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के राजभाषा विभाग द्वारा प्रकाशित यह अर्द्धवार्षिक पत्रिका भारतीय संस्कृति, ज्ञान–परंपरा तथा जीवन–मूल्यों की संवाहक के रूप में निरंतर महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है।

भारतीय संस्कृति सदैव प्रकृति और मानव के मध्य सामंजस्य एवं सह–अस्तित्व की भावना को प्रतिष्ठित करती रही है। हमारी प्राचीन ज्ञान–परंपराएँ यह संदेश देती हैं कि मनुष्य और प्रकृति एक–दूसरे के पूरक हैं। वृक्ष–पूजा, नदियों के प्रति श्रद्धा तथा विविध पूजन–परंपराएँ इसी गहन सांस्कृतिक दृष्टि की अभिव्यक्ति हैं। भारतीय चिंतन में प्रकृति केवल उपभोग का साधन नहीं, बल्कि जीवन का आधार तथा आध्यात्मिक चेतना का अभिन्न अंग मानी गई है।

वर्तमान युग विज्ञान, तकनीक और भौतिक सुविधाओं के तीव्र विस्तार का युग है। निस्संदेह इन उपलब्धियों ने मानव जीवन को अधिक सरल और सुविधाजनक बनाया है, किंतु इसके साथ ही प्रकृति से मनुष्य की दूरी भी निरंतर बढ़ती जा रही है। ऐसे समय में भारतीय ज्ञान–परंपरा हमें संतुलित, संवेदनशील और प्रकृति–सम्मत जीवन जीने की प्रेरणा प्रदान करती है।

भारतीय संस्कृति का मूल मंत्र "वसुधैव कुटुम्बकम्" सम्पूर्ण सृष्टि को एक परिवार मानने की उदात्त भावना का प्रतीक है। यदि हम अपनी परंपराओं और सांस्कृतिक मूल्यों के वास्तविक स्वरूप को समझते हुए उन्हें जीवन में आत्मसात करें, तो समाज में संतुलन, शांति, सह–अस्तित्व तथा पर्यावरण संरक्षण की भावना को और अधिक सुदृढ़ किया जा सकता है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि नई पीढ़ी भारतीय संस्कृति और ज्ञान–परंपरा से आत्मीय रूप से जुड़े तथा उसके जीवन–मूल्यों को आधुनिक संदर्भों में आत्मसात करे। यही हमारी सांस्कृतिक चेतना की वास्तविक शक्ति है और भविष्य के सशक्त, संवेदनशील एवं संतुलित समाज की आधारशिला भी।

इस संग्रहणीय अंक के प्रकाशन हेतु मैं राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के राजभाषा विभाग को अपनी हार्दिक शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ तथा आशा करता हूँ कि यह अंक पाठकों के लिए प्रेरणास्रोत सिद्ध होगा।

प्रदीप कुमार मोहन्ती
कुलसचिव

संपादक की क़लम से

भारत की सांस्कृतिक परंपरा विश्व की सबसे प्राचीन, व्यापक और समृद्ध परंपराओं में से एक है। यहाँ संस्कृति केवल पूजा–पद्धति या रीति–रिवाजों तक सीमित नहीं, बल्कि जीवन जीने की एक संपूर्ण पद्धति है। डॉ. विमलेश कान्ति वर्मा ने अपने आलेख में इस विषय पर विस्तृत रूप से प्रकाश डाला है। भारतीय ज्ञान परंपरा ने मानव जीवन को प्रकृति, नैतिकता, कला और आध्यात्मिकता के साथ जोड़ने का कार्य किया है। यही कारण है कि भारतीय संस्कृति आज भी विश्व के लिए प्रेरणा का स्रोत बनी हुई है।

हमारे प्राचीन ऋषि–मुनियों ने हज़ारों वर्ष पहले यह समझ लिया था कि मानव जीवन और प्रकृति एक–दूसरे से अलग नहीं हैं। वृक्ष पूजा और नदियों के प्रति श्रद्धा इसी सोच का परिणाम है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश को जीवन का आधार मानकर भारतीय परंपरा ने प्रकृति संरक्षण का ऐसा संदेश दिया जो आज के पर्यावरण संकट के समय अत्यंत प्रासंगिक हो गया है।

हिन्दू परंपरा में पीपल, बरगद, तुलसी और नीम जैसे वृक्षों को पूजनीय माना गया। यह केवल धार्मिक आस्था नहीं थी, बल्कि पर्यावरण संरक्षण की वैज्ञानिक सोच भी थी। आज जब जलवायु परिवर्तन, प्रदूषण और जंगलों की कटाई जैसी समस्याएँ बढ़ रही हैं, तब भारतीय संस्कृति की यह दृष्टि मानवता को संतुलित जीवन का मार्ग दिखाती है।

भारतीय संस्कृति का दूसरा महत्वपूर्ण आधार सत्य और नैतिकता है। डॉ. कंचन बाला का आलेख "सत्यमेव जयते" का संदेश देता है, जो भारतीय दर्शन की आत्मा है। भारतीय ज्ञान परंपरा केवल आध्यात्मिकता तक सीमित नहीं रही, बल्कि उसने विज्ञान, गणित, चिकित्सा और कला के क्षेत्र में भी विश्व को नई दिशा दी। वेद, उपनिषद, आयुर्वेद, योग और नाट्यशास्त्र भारतीय बौद्धिक परंपरा की महान उपलब्धियाँ हैं। योग और आयुर्वेद आज विश्वभर में सम्मान प्राप्त कर रहे हैं। यह भारत की उस प्राचीन चेतना का प्रमाण है जिसने मानव कल्याण को सदैव सर्वोच्च स्थान दिया।

भारतीय कला और संस्कृति भी हमारी सभ्यता की पहचान हैं। संगीत, नृत्य, ललित कला और स्थापत्य भारतीय जीवन के अभिन्न अंग रहे हैं। सामवेद से विकसित संगीत परंपरा, भरतनाट्यम और कथक जैसे नृत्य–रूप, अजंता–एलोरा की चित्रकला तथा खजुराहो और बृहदेश्वर मंदिरों का स्थापत्य भारतीय कला की अद्भुत ऊँचाइयों को दर्शाता है। भारतीय कला केवल सौंदर्य की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि आध्यात्मिक चेतना का माध्यम भी रही है।

भारतीय महिलाओं के आभूषण पर आधारित आलेख में यह बताया गया है कि भारतीय महिलाओं के आभूषण केवल श्रृंगार का साधन नहीं, बल्कि संस्कृति और परंपरा के प्रतीक हैं। माँग–टीका, मंगलसूत्र, चूड़ियाँ और पायल जैसे आभूषण भारतीय नारी की गरिमा और सांस्कृतिक पहचान को व्यक्त करते हैं। इनके पीछे धार्मिक, सामाजिक और वैज्ञानिक महत्व भी जुड़ा हुआ है।

आज आधुनिकता और वैश्वीकरण के प्रभाव के कारण पारंपरिक जीवन–मूल्यों और सांस्कृतिक धरोहरों से दूरी बढ़ती जा रही है। नई पीढ़ी का झुकाव तेज़ी से पाश्चात्य जीवनशैली की ओर हो रहा है। यह परिवर्तन स्वाभाविक है, परंतु इसके साथ अपनी सांस्कृतिक जड़ों से जुड़ाव बनाए रखना भी उतना ही आवश्यक है।

भारतीय संस्कृति की सबसे बड़ी शक्ति उसकी समन्वयकारी भावना है। "वसुधैव कुटुम्बकम्" का विचार सम्पूर्ण विश्व को एक परिवार मानने की प्रेरणा देता है। यही भावना आज के विभाजित और संघर्षपूर्ण विश्व में शांति और सहअस्तित्व का आधार बन सकती है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी परंपराओं को केवल अंधविश्वास या औपचारिकता के रूप में न देखें, बल्कि उनके वास्तविक अर्थ और वैज्ञानिक दृष्टि को समझें। यदि भारतीय ज्ञान परंपरा, प्रकृति संरक्षण, नैतिक मूल्यों और सांस्कृतिक धरोहरों को आधुनिक जीवन के साथ जोड़ा जाए, तो एक संतुलित और मानवीय समाज का निर्माण संभव है।

भारतीय संस्कृति केवल अतीत की स्मृति नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य की दिशा भी है। यह हमें सत्य, प्रकृति प्रेम, कला, करुणा और मानवता का संदेश देती है। यही हमारी पहचान है और यही भारत की सबसे बड़ी शक्ति भी।

इस अंक में हमने भारतीय संस्कृति के वृहद स्वरूप के कुछ पक्षों को छूने का प्रयास किया है। हम अपने प्रयास में कहां तक सफल रहे, ये आप सुधि पाठकगण तय करेंगे।

चेतना वशिष्ठ

चेतना वशिष्ठ
संपादक

भाषा और संस्कृति

डॉ. विमलेश कान्ति वर्मा

किसी भी देश की संस्कृति के मूल स्वरूप को समझने के लिए नृतत्वशास्त्री और समाजशास्त्री दोनों ही उस देश की भाषाओं का अध्ययन और विश्लेषण आवश्यक मानते हैं। भारतीय संस्कृति के स्वरूप को अपनी पूर्णता में समझने के लिए भाषा के गूढ़ार्थ को समझना आवश्यक है।

भारतीय संस्कृति की मूल भित्ति 'परहित' है। 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' जैसे आर्ष वाक्यों में यह प्रतिबिंबित भी है।

जनसमाज और महात्मा गांधी की दृष्टि में भी व्यक्ति के पूर्ण विकास के प्रतीक भगवान श्री राम हैं, इसलिए वे आदर्श पुरुष हैं। वे आदर्श पुत्र, आदर्श भाई, आदर्श पति, आदर्श मित्र, आदर्श स्वामी, आदर्श राजा और संक्षेपतः पूर्ण आदर्श पुरुष और अनुकरणीय व्यक्ति हैं। उनके इस आदर्श का मूल 'परहित' में वह व्यक्ति, जो अपनी चिंता न कर दूसरों के हित की चिंता करता है, वही श्रेष्ठ है। गांधी का प्रिय भजन–'वैष्णव जन तो तेने कहिये पीर पराई जाणे रे' भी इसी आदर्श की बात करता है। 'परहित' की बात कवि शिरोमणि तुलसीदास भी निम्नलिखित पंक्तियों के रूप में ही करते हैं–

'परहित सरिस धर्म नहिं भाई।
पर पीड़ा सम नहि अधमाई।।
रामचरितमानस 7.40.1

'कीरति भनिति भूति भल सोई।
सुरसरि सम सब कहँ हित होई।।
रामचरितमानस 1.13.9

यहाँ 'सम' और 'सब' शब्द महत्वपूर्ण है–अर्थात सबके लिए और समान रूप से। यही सार्वजनीनता तथा समभाव भारतीय संस्कृति की आधार शिला है। जिस राज्य में सब अपने से पहले दूसरे के हित की रक्षा में तत्पर हों ऐसा राज्य 'रामराज्य' कहलाता है। राम राज्य की व्याख्या तुलसी ने–'बयरु न करि काहू सन कोई' कहकर की है–

बयरु न कर काहू सन कोई।
राम प्रताप विषमता खोई।।
रामचरितमानस 7.19.8

भारतीय संस्कृति इसी सिद्धि 'परहित' की प्राप्ति का उपक्रम है। दूसरे के हित की चिंता अपने से पहले करना भारतीय संस्कृति का मूल है। इसे ही किसी ने समझाते हुए कहा है–भूख लगने पर खाना 'कृति' है, दूसरे का खाना छीनकर खा लेना 'विकृति' है और अपना खाना खुद भूखे रहकर किसी भूखे को खिला देना 'संस्कृति' है। महात्मा गांधी का सारा दर्शन इसी 'पर' की संतुष्टि और संतृप्ति के लिए था।

प्रेम, स्नेह, सम्मान, करुणा, दया, उदारता, सहनशीलता आदि सभी भावों की अभिव्यक्ति कायिक भी है और वाचिक भी। वाचिक अभिव्यक्ति की व्याप्ति कायिक की तुलना में बहुत व्यापक है। यह वाचिक अभिव्यक्ति भाषा का विषय है।

भाषा, संस्कृति की प्रमुख घटक है जो उतराधिकार में माँ से व्यक्ति को प्राप्त होती है और जीवन पर्यंत उसके साथ रहती है। व्यक्ति अपनी भावाभिव्यक्ति सबसे अच्छी तरह और पूर्ण आत्मविश्वास के साथ अपनी मातृभाषा में ही कर सकता है ।

संस्कृति को पूर्ण अभिव्यक्ति भी भाषा ही देती है। अर्थ की दृष्टि से भाषा कई स्तरों पर कार्य करती है इसलिए संस्कृति को समझने के लिए भाषा की अंतर्दृष्टि आवश्यक मानी जाती है। भाषा की अर्थ सृष्टि कई परतों में होती है इसीलिए एक भाषिक अभिव्यक्ति का प्रभाव

की महत्ता के द्योतक है। ये सभी स्थितियां पुरुष की तुलना में स्त्री जाति की महता का प्रतीकात्मक संकेत देती हैं।

विश्व में तीन प्रकार के बल या शक्तियां मानी गई हैं– बुद्धिबल, धनबल और भुजबल। ये तीनों जिसके पास हैं वह हर दृष्टि से सर्व समर्थ व्यक्ति है। भारतीय पुराण शास्त्र में इन शक्तियों की प्रतीक स्वरूपा क्रमशः सरस्वती, लक्ष्मी और दुर्गा हैं। बाद में ब्रह्मा, विष्णु और महेश इनके साथ जोड़ दिए गये। भारतीय धर्म शास्त्र में ये तीनो देवियाँ ही बुद्धि, धन और बल प्रदायिनी शक्तियां हैं। इन की आराधना ही व्यक्ति को सर्व समर्थ बनाती है। दीपावली के अवसर पर कही जाने वाली 'लक्ष्मी नारायण और भिखारी' की कथा भी इसी ओर संकेत करती है कि जो विष्णु नहीं कर पा रहे वह लक्ष्मी के माध्यम से सरलता से हो जाता है। ये सब हमारे सांस्कृतिक प्रतीक हैं। कहने का तात्पर्य यही है कि भाषा तत्वान्वेषी सांस्कृतिक प्रतीकों का उदघाटन कर सकती है।

व्यक्तिभेद से विभिन्न हो जाता है। इसे ही भारतीय काव्यशास्त्र में शब्द शक्ति की संज्ञा दी गई है। एक ही अभिव्यक्ति विभिन्न स्तर के व्यक्तियों के लिए विभिन्न अर्थ देती है।

अँग्रेज़ी भाषा का एक उदाहरण देना चाहूँगा। अँग्रेज़ी भाषा में महिला या स्त्री के लिए woman, she, lady, female आदि शब्द हैं। इन सभी स्त्रीवाची शब्दों में पुरुषवाची शब्द अंतर्संगुम्फित है–यथा woman में man, she में he, lady में lad, female में male आदि। क्या आपको यह संयोग लगता है? भाषा में संयोग नहीं होता, अभिव्यक्ति की पृष्ठभूमि में मुनि मानस कार्य करता है जो भाषा के माध्यम से सांस्कृतिक भाव भंगिमाओं को स्पर्श करता है। अँग्रेज़ी के समान ही संस्कृत में स्त्री के लिए दारा, स्त्री और कलत्र शब्दों का प्रयोग होता है। व्याकरण की दृष्टि से 'दारा' पुल्लिंग शब्द है ,'स्त्री' स्त्रीलिंग शब्द है और 'कलत्र' नपुंसकलिंग शब्द है। तीनो भाषिक लिंगों में स्त्री वाची शब्द का प्रयोग समाज में नारी के महत्व की ओर संकेत करता है। हम सभी जानते हैं कि भाषा एक यादृच्छिक व्यवस्था है। हिंदी शब्द 'नारी' में भी 'र' समाहित है। ये सारे प्रयोग भाषा के माध्यम से जाति और देश के संस्कारों या संस्कृति की अभिव्यक्ति हैं। इसी प्रकार राधाकृष्ण और सीताराम शब्द हैं जहाँ पूर्वपद में राधा और सीता का प्रयोग स्त्री

भारतीय संस्कृति में वय सम्मान की परम्परा है। यह सांस्कृतिक परम्परा भाषा में भी प्रतिबिंबित होती है। हिंदी, में अभिवादन के लिए सामान्यतः तीन शब्दों का प्रयोग होता है –'नमस्ते', 'प्रणाम' और 'चरण स्पर्श'। 'नमस्ते' का प्रयोग समवयस्कों के लिए तथा बड़ों, दोनों के लिए हो सकता हैं पर 'प्रणाम' छोटा बड़े को करता है इसी प्रकार वय में छोटा बड़े के 'चरण स्पर्श' करता है और बड़ा छोटे को आशीर्वाद देता है। इस व्यवस्था में व्यतिक्रम व्यक्ति को उपहास का पात्र बना सकता है।

हिंदी में इसी प्रकार व्यक्तिवाची मध्यम पुरुष सर्वनाम भी तीन हैं–तू, तुम और आप। पिता बेटे के लिए 'तू' और 'तुम' का प्रयोग करता है जबकि बेटा पिता के लिए 'आप' संबोधन का प्रयोग करता है। यदि बेटा पिता के लिए 'तू' और 'तुम' का प्रयोग करने लगे और पिता बेटे के लिए 'आप' का प्रयोग कर रहा है तो समझिये पिता की परिवार में स्थिति दयनीय है। इसी वय के सम्मान के कारण एक अनजान स्त्री के लिए वय के अनुसार भाभी, बहन, चाची, मौसी, मामी, माताजी आदि संबोधन का तथा पुरुष के लिए चाचा, ताऊ, भाई आदि का प्रयोग होता है जबकि अँग्रेज़ी में पारिवारिक संबंधों की इतनी गहन सामाजिक व्यवस्था नहीं है।

जहाँ भारतीय समाज में जैसा कि ऊपर मैंने संकेत दिया है, जननी होने के कारण स्त्री को सर्वाधिक सम्मान दिया गया है वहीं पुरुष की वर्चस्विता का प्रतिबिम्बन हिंदी की भाषिक संरचना में दिखता है। यही कारण है कि प्रमुखता दिखाने के लिए राष्ट्रपति, सेनापति, नगरपति, महीपति, भूपति आदि शब्द बने हैं। अवधेय है कि राष्ट्रपति तो समाज सम्मत प्रयोग है, पर राष्ट्रपत्नी नहीं, नगरपति का प्रयोग लोक सम्मत प्रयोग है पर नगर वधू का नहीं इसी तरह मंत्री, प्रधानमन्त्री आदि शब्द पुरुष का बोध कराते हैं। शब्दों में ही नहीं वाक्य संरचना में भी लैंगिक पक्षपात के रूप समाज भाषावैज्ञानिक देखता है। उदहारण

राम और लक्ष्मण जाते हैं।
सीता और महिमा जाती हैं।

पर

राम और सीता जाते हैं।
सीता और राम जाते हैं।

अर्थात यदि स्त्री और पुरुष दोनों हों तो क्रिया रूप सर्वदा पुल्लिंग में ही होगा। भाषा में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जो समाज के स्वरूप का परिचय देते हैं।

स्त्री की नैसर्गिक शक्ति की उत्कृष्टता तथा पुरुष की सामजिक वर्चस्विता दोनों के भाषिक संकेत भाषिक संरचना में दिखाई पड़ते हैं। दोनों शक्तियों के प्राकृतिक संतुलन को भाषा में अर्धनारीश्वर के रूप में दिखाया गया है। अर्धनारीश्वर की परिकल्पना समाज में स्त्री और पुरुष दोनों के संयुक्त रूप में शाब्दिक प्रतीक के माध्यम से अभिव्यक्त करने की चेष्टा की गई है।

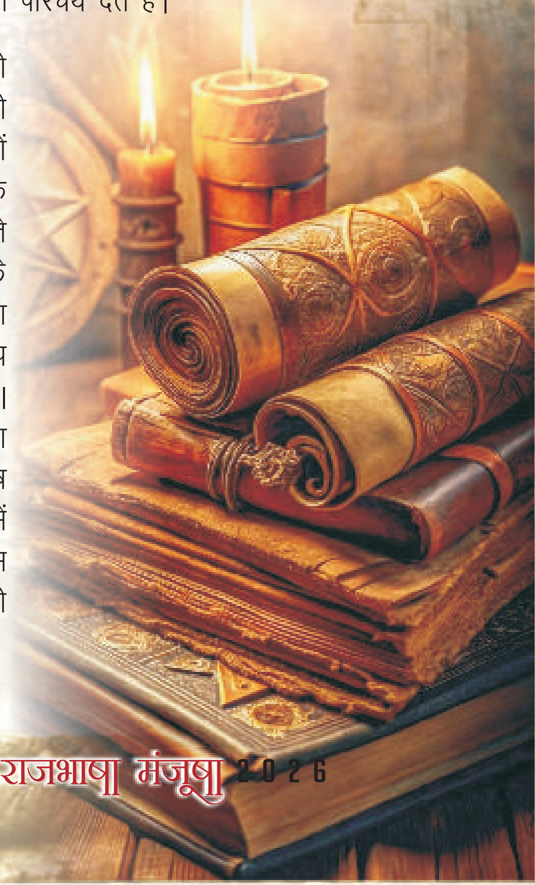

भाषा और संस्कृति का अभिन्न सम्बन्ध है। कहा जाता है कि व्यक्ति के संस्कार उसकी भाषा में झलकते हैं। व्यक्ति की भाषा यह बता देती है कि व्यक्ति कितना संस्कारवान, शालीन और सभ्य है। रहीम की बड़ी प्रसिद्ध उक्ति है–

दोनों रहिमन एक से, जब लौं बोलत नाहिं।
जान परत हैं काक–पिक, रितु बसंत के माहिं।।

रहीम–रत्नावली, सम्पादक : मयाशंकर याज्ञिक, साहित्य– सेवा– सदन, काशी, 1928 /एक व्यक्ति के बोलने का तरीका, उसकी शालीनता और सभ्यता का संकेत देता है। कौआ और कोयल दोनों अपनी आवाज़ से पहचान लिए जाते हैं।

भारतीय संस्कृति का मूलभूत दर्शन सामजिक संतुलन या सह अस्तित्व के भाव में देखा गया है। गांधी के राम राज्य में 'सुराज' या आदर्श राज्य 'रामराज्य' की भित्ति भी सह अस्तित्व पर आधारित है जिसमें "बयरु न कर काहू सन कोई" है।

महात्मा गांधी ने देश की राष्ट्रभाषा के सन्दर्भ में हिंदी को 'राष्ट्रभाषा' के रूप में प्रचारित किया पर बाद में जब उन्होंने देखा कि हिंदी के साथ उर्दू के कारण विद्वेष पनपता दिख रहा है तो वे 'हिंदी' के स्थान पर 'हिन्दुस्तानी' की बात करने लगे। भाषा के सन्दर्भ में महात्मा गांधी का यह हृदय परिवर्तन सामाजिक– सांप्रदायिक संतुलन के रूप में देखा जाना चाहिए, जहाँ वे चाहते थे कि राष्ट्रभाषा तोड़ने का नहीं जोड़ने का कार्य करे। संस्कृति का मूल व्यक्ति को एक दूसरे से जोड़ना है। परोपकार में 'पर' का भाव महत्वपूर्ण है 'परहित' ही सबसे बड़ा धर्म है–

परहित सरिस धरम नहीं भाइ।
पर पीड़ा सम नहीं अधमाइ।।
रामचरितमानस 7.40.1

भाषा का लक्ष्य भी एक को दूसरे से जोड़ना है। संयोग, सम्भोग, सम्प्रेषण सभी में महत्व पूर्ण पद 'सम' ही है जो दो को जोड़ने की बात करते हैं। भाषा और संस्कृति व्यक्ति को जोड़ने का और सहस्तित्व का माध्यम जब बने तभी व्यक्ति का पूर्ण विकास माना जाता है और हमारे शास्त्र और विज्ञान, में इसी का प्रयत्न हैं। इसीलिए हम अपने सुखी होने की कामना न कर "सर्वे भवन्तु सुखिनः" की बात करते हैं।

व्यक्ति के पूर्ण विकास का अर्थ मूलतः सह अस्तित्व के मंत्र की सिद्धि में हैं जिसका मूलाधार 'परहित' में है जो व्यक्तित्व को पूर्णता देती है और यह व्यक्ति के भाषिक व्यवहार और सुसंस्कृत आचरण में दिखता है।

संपर्क सूत्रः डॉ. विमलेश कान्ति वर्मा, प्रख्यात भाषा वैज्ञानिक
Email: vimleshkanti@gmail.com

संस्कृति सबकी एक चिरंतन, कोटि-हृदय का भाव एक हो

डॉ. कन्हैया झा

इतिहास गवाह है कि अनेक प्राचीन सभ्यताएँ जैसे मिस्र, मेसोपोटामिया, ग्रीक, रोमन आज केवल संग्रहालयों और पुरातात्विक खंडहरों में बची हैं। उनकी भाषाएँ मृत हैं, उनके देवता केवल कथा साहित्य में जीवित हैं, और उनके जीवन–मूल्य आधुनिक समाज का मार्गदर्शन नहीं करते। किंतु भारत की संस्कृति आज भी जीवित है और न केवल जीवित है, बल्कि पूरे विश्व को सुगंधित कर रही है। भारत एक सांस्कृतिक राष्ट्र है, जिसके मूल–स्तम्भ हैः समरसता, सेवा, कर्तव्यपरायणता और एकात्मता।

प्रचलित धारणा के विपरीत, कोई राष्ट्र केवल भूमि, सीमाओं, सेना या अर्थव्यवस्था का नाम नहीं है। जिसे दुनिया राष्ट्र समझती है वह तो वास्तव में राज्य (स्टेट) है। राष्ट्र का वास्तविक अस्तित्व उसकी सांस्कृतिक चेतना में होता है। भारत में यह चेतना सहस्राब्दियों से अबाध रूप से प्रवाहित हो रही है। इस चेतना का मूल तत्व 'एकम् सत्य विप्रा बहुधा वदन्ति'–परम सत्य एक ही है, जिसे ज्ञानी या विद्वान अलग–अलग नामों से पुकारते हैं।

कश्मीर से कन्याकुमारी तक, द्वारका से कामाख्या तक, भाषाएँ बदलती हैं, वेशभूषा बदलती है, खान–पान बदलता है, किंतु जीवन का मूल सूत्र परिवार के प्रति सम्मान, समाज के प्रति कर्तव्य, राष्ट्र के प्रति निष्ठा, प्रकृति के प्रति श्रद्धा यह कहीं नहीं बदलता। यही सांस्कृतिक सूत्र भारत को एक राष्ट्र के रूप में बाँधे रखता है। इसी को 'कोटि हृदयों का एक भाव' कहा गया है। यह एक भाव किसी बाहरी आदेश का परिणाम नहीं, बल्कि आंतरिक सांस्कृतिक संस्कारों का परिणाम है।

जब 1857 का स्वाधीनता संग्राम छिड़ा, तो झाँसी की रानी, तात्या टोपे और नाना साहब समेत सभी क्रान्तिकारी देश के भिन्न क्षेत्रों, भिन्न परंपराओं से आते हुए भी एक ही उद्देश्य के लिए लड़े। जब वीर सावरकर, महात्मा गाँधी, लाला लाजपतराय, सरदार वल्लभ भाई पटेल, सुभाष बोस और भगत सिंह जैसे नेता एक साथ संघर्ष कर रहे थे, उनकी विचारधाराएँ भिन्न थीं, पर उनका 'भारत माता' के प्रति भाव एक था। यही वह सांस्कृतिक एकात्मता है जो भारत को चिरंतन बनाती है।

भारतीय संस्कृति का प्राण तत्व समरसता है। समरसता का अर्थ केवल सह–अस्तित्व नहीं, अपितु परस्पर आत्मीयता, यह आत्मीयता न केवल भारतीयों के प्रति अपितु, हमारे 'वसुधैव कुटुम्बकम' की अवधारणा पर आधारित विश्व बंधुत्व के प्रति हमारी प्रतिबद्धता की याद दिलाती है। यह भावना एक–दूसरे के सुख–दुःख में भागीदारी और सभी प्रकार के भेदों को मिटाकर एक परिवार की भाँति जीना है। यह भावना भारत की हर परंपरा में, हर रीति में, हर त्योहार में अंतर्निहित है।

कुंभ मेला इस समरसता का सबसे बड़ा जीवंत उदाहरण है। करोड़ों की संख्या में लोग, चाहे वे उत्तर के हों या दक्षिण के,

पूर्व के हों या पश्चिम के, या विश्व के किसी भी कोने के, चाहे उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा कोई भी हो एक ही घाट पर एक साथ डुबकी लगाते हैं। यह कोई संगठित कार्यक्रम नहीं है, यह सहस्राब्दियों के संस्कारों का सहज प्रस्फुटन है। इसी प्रकार, जब देश के किसी कोने में प्राकृतिक आपदा आती है, जैसेः बाढ़ आती है, चक्रवात आता है या कोई अन्य आपदा आती है, तो देश के दूसरे छोर से बिना किसी जाति, भाषा या क्षेत्र के भेदभाव मुक्त सहायता पहुँचती है। चन्दन जैसे स्वयं तपता है पर दूसरों को शीतलता देता है, यही समरसता का सौंदर्य है। भारतीय संस्कृति ने सदैव यह सिखाया कि व्यक्ति का सुख समाज के सुख में, समाज का सुख राष्ट्र के सुख में, और राष्ट्र का सुख समस्त मानवता के कल्याण में निहित है। यही 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का संदेश है समस्त विश्व एक परिवार है। जो संस्कृति सेवा के भाव से ओत–प्रोत नहीं है, वह चिरंतन नहीं हो सकती। भारत की संस्कृति में सेवा को सर्वोच्च स्थान दिया गया है। 'सेवा ही परम धर्म है' यह भावना हर भारतीय के रक्त में रची–बसी है। चाहे वह प्राकृतिक आपदा हो, युद्ध हो, या कोई वैश्विक संकट भारत ने सदैव सेवा के भाव से काम किया है।

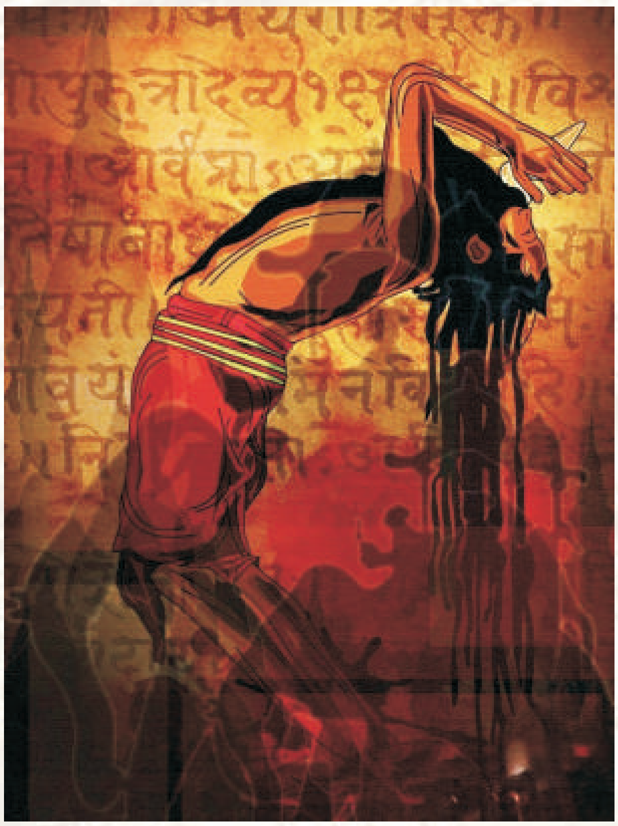

कोरोना महामारी के समय, जब विकसित देश अपनी–अपनी दवाइयाँ और वैक्सीन अपने पास रोके हुए थे, भारत ने दुनिया भर को वैक्सीन भेजी। यह कोई राजनीतिक निर्णय मात्र नहीं था, यह उस सांस्कृतिक संस्कार का परिणाम था जो सिखाता है कि अपने सुख की अपेक्षा दूसरों के दुःख का निवारण बड़ा है। आज योग, आयुर्वेद, भारतीय दर्शन और संगीत पूरे विश्व में लोकप्रिय हो रहे हैं यह भी इस बात का प्रमाण है कि भारतीय संस्कृति ने कभी अपनी सेवा और सुगंध बाँटना नहीं छोड़ा।

इतिहास के पन्नों को जब पलटकर देखते हैं तो ध्यान में आता है कि आक्रमणों के अनेक थपेड़ों और विश्वासघातों के बवंडरों के बावजूद हमने महकना नहीं छोड़ा है। चन्दन जलाने पर अधिक सुगंध देता है। भारत ने आक्रमणों, उपनिवेशवाद और आंतरिक कलह के बावजूद न केवल स्वयं को बचाया, बल्कि दुनिया को यह संदेश दिया कि अहिंसा, सत्य, सेवा और समरसता ही मानवता के अमर मूल्य हैं।

कर्तव्यबोध भारतीय संस्कृति को चिरंतन बनाने वाला सबसे महत्वपूर्ण तत्व है। जहाँ अधिकतर पश्चिमी सभ्यताएँ 'अधिकारों' पर केन्द्रित हैं, वहाँ भारतीय परंपरा 'कर्तव्यों' पर केन्द्रित रही है। व्यक्ति से परिवार का निर्माण होता है, परिवार से समाज बनता है और समाज से राष्ट्र का अस्तित्व बनता है, इस राष्ट्र को धर्म चलाता है। जहाँ प्रत्येक व्यक्ति के नियत कर्तव्य है, जिसे वह स्वयं–प्रेरणा से निभाता है। व्यक्ति को अनेक कर्तव्यों का निर्वहन करना होता है जैसे परिवार के प्रति, समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति, समस्त सृष्टि के प्रति। इनके पालन से ही राष्ट्र का निर्माण होता है।

यह कर्तव्यबोध ही है जिसने भारतीय समाज को बार–बार टूटने से बचाया। जब कभी भी संकट आया, व्यक्ति ने अपने अधिकारों को भूलकर अपने कर्तव्यों का पालन किया। चाहे वह युद्धभूमि में राजा का कर्तव्य हो, चाहे परिवार में माता–पिता का, चाहे गुरुकुल में शिष्य का, सबसे पहले 'मैं क्या पाऊँ, नहीं पूछा गया, बल्कि 'मैं क्या दूँ? पर बल दिया गया। यह करते हुए उसके मन में केवल एक ही भाव रहा है "तेरा वैभव अमर रहे माँ, हम दिन चार रहें न रहें"।

इसीलिए भारतीय संस्कृति ने कभी यह नहीं कहा कि 'संसार दुःखमय है, इससे भागो', बल्कि कहा 'उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत' उठो, जागो, श्रेष्ठ पुरुषों के पास जाकर ज्ञान प्राप्त करो। यह जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण, यह कर्तव्यपरायणता, यह संघर्ष और निर्माण का भाव–यही भारत की संस्कृति को चन्दन के समान बनाता है, जो जलने पर भी सुगंधित रहता है।

कोई संस्कृति तभी चिरंतन हो सकती है जब वह परिवर्तनशील परिस्थितियों में अपने मूल संस्कारों की रक्षा करते हुए नवाचार को भी स्थान दे। भारतीय संस्कृति ने यह अद्भुत समन्वय किया है। उसने कभी यह नहीं कहा कि परंपराएँ अबाध रूप से चलती रहेंगी, न ही यह कहा कि सब कुछ नया कर दो। देश–काल–परिस्थिति के अनुसार जो भी काल–सुसंगत है उसे स्वीकार करना तथा जो काल–बाह्य है उसका त्याग करना। भारत ने 'स्थितप्रज्ञ' (स्थिर बुद्धि) का आदर्श दिया जो परिवर्तन को स्वीकार करता है, पर अपने मूल सत्य को नहीं खोता।

आज हम देखते हैं कि योग 5000 वर्ष पुरानी तकनीक है, किंतु आज के युवा इसे स्मार्टफोन के माध्यम से सीख रहे हैं। आयुर्वेद प्राचीन चिकित्सा पद्धति है, किंतु आज वैश्विक प्रयोगशालाओं में इसका अनुसंधान हो रहा है। भारतीय शास्त्रीय संगीत हजारों वर्ष पुराना है, किंतु आज यह डिजिटल प्लेटफार्म पर करोड़ों लोगों तक पहुँच रहा है।

यही वह क्षमता है जो भारतीय संस्कृति को चन्दन के समान बनाती है, चन्दन अपनी सुगंध नहीं बदलता, पर वह हर युग में, हर परिस्थिति में, हर पात्र में अपनी सुगंध फैलाने का रास्ता ढूँढ ही लेता है।

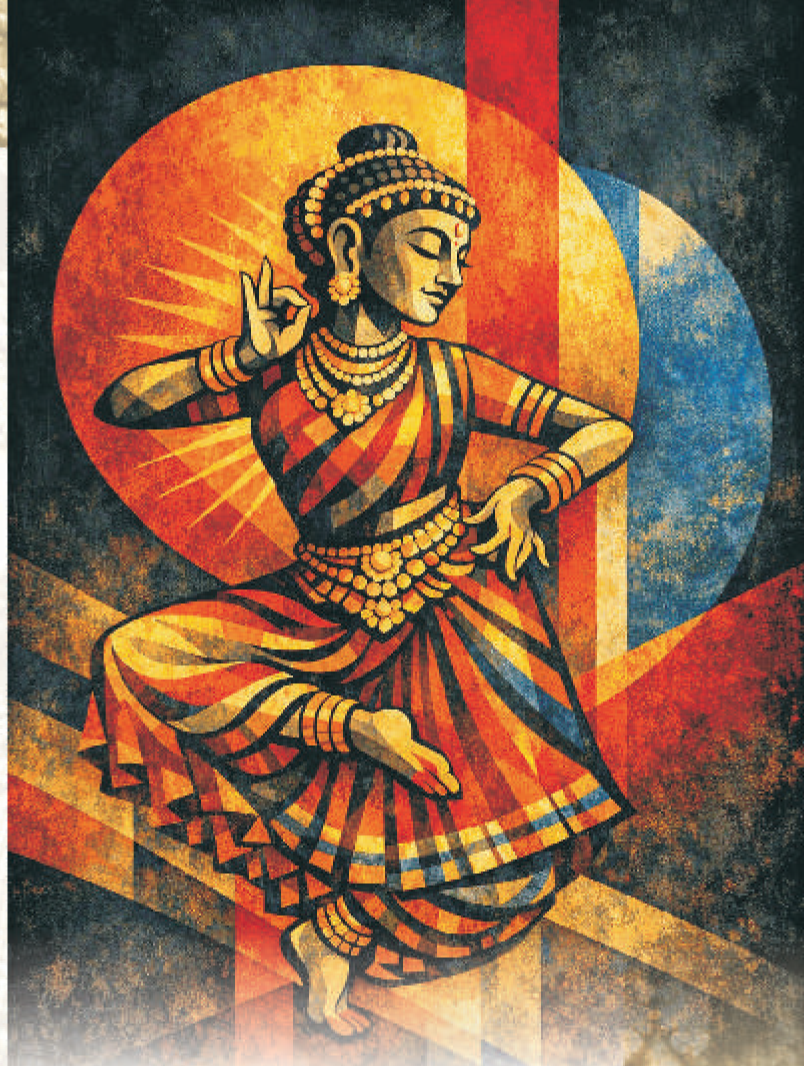

किसी संस्कृति का चिरंतन होने का यह अर्थ नहीं कि वह पूर्ण थी या है। पूर्ण होना तो मृत्यु की निशानी है। जीवित संस्कृति वह है जो अपनी कमियों को पहचानती है और उन्हें सुधारने का सतत प्रयास करती है। भारतीय संस्कृति ने यह आत्मालोचना कभी नहीं छोड़ी।

जब समाज में कर्म आधारित जाति का काल–अन्तराल में परिवर्तन, जन्म आधारित हो गया, जब जातिगत भेद और ऊँच–नीच बढ़े, तो बुद्ध और महावीर ने उठकर कहा 'जाति नहीं, कर्म प्रधान है।' जब रूढ़ियाँ प्रबल हुईं, तो कबीर, रैदास, नामदेव और तुकाराम ने कहा 'कोई ऊँच न कोई नीच।' जब स्त्रियों पर अत्याचार हुए, तो राममोहन राय ने सती प्रथा के विरुद्ध आवाज उठाई, और ज्योतिबा फुले ने स्त्री–शिक्षा के लिए संघर्ष किया।

यह आत्मालोचना, यह निरंतर सुधार की भावना यही भारतीय संस्कृति को चिरंतन बनाती है। एक मृत संस्कृति अपनी गलतियों को स्वीकार नहीं करती, एक जीवित संस्कृति गलतियों से सीखती है और आगे बढ़ती है।

सम्पर्क सूत्र : डॉ. कन्हैया झा, निजी सचिव, अध्यक्ष कार्यालय, एन.एस.डी

E-mail: jhadrkanhaiya@gmail.com

सत्यमेव जयते: भारतीय संस्कृति और जीवन-दर्शन का शाश्वत मन्त्र

डॉ. कंचन बाला

"सत्यमेव जयते" भारतीय संस्कृति का एक ऐसा अमर वाक्य है जो केवल शब्द नहीं, बल्कि जीवन का महान आदर्श है। इसका अर्थ है– "सत्य की ही विजय होती है।" यह वाक्य हमारे राष्ट्रीय प्रतीक के नीचे अंकित है और भारतीय राष्ट्र की आत्मा का प्रतिनिधित्व करता है। यह केवल एक नारा नहीं, बल्कि मानव जीवन को सही दिशा देने वाला सिद्धांत है।

आज के समय में जब समाज अनेक प्रकार की चुनौतियों, असत्य, भ्रष्टाचार, हिंसा और छल–कपट से जूझ रहा है, तब "सत्यमेव जयते" का महत्व और भी बढ़ जाता है। सत्य मनुष्य के चरित्र को मज़बूत बनाता है और समाज में विश्वास, न्याय तथा नैतिकता की स्थापना करता है।

भारतीय दर्शन में सत्य को ईश्वर के समान माना गया है। हमारे ऋषि–मुनियों, संतों और महापुरुषों ने सदैव सत्य के मार्ग पर चलने का संदेश दिया। राजा हरिश्चंद्र से लेकर महात्मा गांधी तक अनेक महान व्यक्तित्वों ने सत्य को अपने जीवन का आधार बनाया।

"सत्यमेव जयते" शब्द **मुण्डक उपनिषद** से लिया गया है। इसका पूरा श्लोक है–

"सत्यमेव जयते नानृतं
सत्येन पन्था विततो देवयानः।"

अर्थात–

सत्य की ही विजय होती है, असत्य की नहीं। सत्य का मार्ग ही मनुष्य को उच्चतम लक्ष्य तक पहुँचाता है।

यह वाक्य भारतीय ज्ञान परंपरा की महानता को दर्शाता है। हमारे पूर्वजों ने हज़ारों वर्ष पहले ही यह समझ लिया था कि समाज और मानव जीवन की वास्तविक शक्ति सत्य में ही निहित है।

भारतीय संस्कृति में सत्य को सर्वोच्च धर्म माना गया है। वेदों और उपनिषदों में सत्य को जीवन का मूल आधार बताया गया है।

धर्म का अर्थ केवल पूजा–पाठ नहीं, बल्कि सही आचरण और नैतिक जीवन है। सत्य के बिना धर्म अधूरा है। इसलिए कहा गया है–

"सत्यं वद, धर्मं चर।"

अर्थात् सत्य बोलो और धर्म का पालन करो।

भारत के राष्ट्रीय प्रतीक के नीचे "सत्यमेव जयते" अंकित है। इसे 26 जनवरी 1950 को अपनाया गया। इसे राष्ट्रीय प्रतीक अशोक स्तंभ से लिया गया है, जो सम्राट अशोक के शासनकाल की याद दिलाता है। इसके नीचे लिखा "सत्यमेव जयते" भारत की नैतिक और सांस्कृतिक चेतना का प्रतीक है।

यह संदेश देता है कि भारत का लोकतंत्र सत्य, न्याय और नैतिकता पर आधारित है। सत्य मनुष्य के चरित्र को मजबूत बनाता है। जो व्यक्ति सत्य बोलता है, वह समाज में सम्मान प्राप्त करता है। सत्यवादी व्यक्ति को किसी प्रकार का भय नहीं होता। उसका आत्मविश्वास मजबूत रहता है। असत्य

बोलने वाला व्यक्ति सदैव डर और चिंता में रहता है, जबकि सत्य बोलने वाला व्यक्ति मानसिक शांति का अनुभव करता है।

सत्य रिश्तों की नींव है। परिवार, समाज और मित्रता का आधार विश्वास है और विश्वास सत्य से ही पैदा होता है। न्यायालयों में सत्य का बहुत महत्व है। गवाह से शपथ दिलाई जाती है कि वह सत्य बोलेगा। न्याय तभी संभव है जब सत्य सामने आए।

ईमानदार प्रशासन और पारदर्शी राजनीति समाज को मज़बूत बनाती है। यदि नेता और अधिकारी सत्यनिष्ठ हों, तो देश का विकास तेज़ी से हो सकता है। व्यापार में सत्य और ईमानदारी विश्वास को बढ़ाते हैं। असत्य और भ्रष्टाचार आर्थिक व्यवस्था को कमज़ोर करते हैं। आज का युग तकनीक और सूचना का युग है। सोशल मीडिया और इंटरनेट ने संचार को आसान बनाया है, लेकिन इसके साथ कई समस्याएँ भी बढ़ी हैं। फ़र्ज़ी समाचार और अफ़वाहें समाज में भ्रम और तनाव पैदा करती हैं। भ्रष्टाचार असत्य का ही रूप है। यह समाज और राष्ट्र की प्रगति में बाधा बनता है।

आज लोग सोशल मीडिया पर वास्तविकता से अलग जीवन दिखाने का प्रयास करते हैं। इससे मानसिक तनाव और असंतोष बढ़ता है। अगर हम शिक्षा की बत करें तो शिक्षा का उद्देश्य केवल ज्ञान देना नहीं, बल्कि अच्छे संस्कार देना भी है। विद्यालयों में बच्चों को सत्य, ईमानदारी और नैतिकता का महत्व सिखाना आवश्यक है। यदि बचपन से ही सत्य का संस्कार दिया जाए, तो भविष्य में एक आदर्श समाज का निर्माण हो सकता है।

भारतीय साहित्य में भी सत्य को हमेशा महत्व दिया गया है।

कबीरदास ने कहा–

"साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप।"

अर्थात् सत्य से बड़ा कोई तप नहीं और झूठ से बड़ा कोई पाप नहीं। प्रेमचंद की कहानियों में सामाजिक सत्य और यथार्थ का चित्रण मिलता है।

आध्यात्मिक जीवन में सत्य का विशेष महत्व है। योग, ध्यान और साधना का उद्देश्य आत्मसत्य को पहचानना है। भारतीय दर्शन के अनुसार आत्मज्ञान का मार्ग सत्य से होकर गुजरता है।

सत्य का मार्ग आसान नहीं होता। कई बार सत्य बोलने वाले व्यक्ति को कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।लोग उसका विरोध करते हैं ।उसे नुकसान उठाना पड़ सकता है। समाज तुरंत उसका साथ नहीं देता लेकिन इतिहास गवाह है कि अंततः विजय सत्य की ही होती है।

आज जब दुनिया हिंसा, युद्ध, भ्रष्टाचार और असत्य से प्रभावित है, तब "सत्यमेव जयते" का संदेश पूरी मानवता के लिए महत्वपूर्ण है। यदि व्यक्ति, समाज और राष्ट्र सत्य को अपनाएँ तो न्याय स्थापित होगा, भ्रष्टाचार कम होगा, सामाजिक विश्वास बढ़ेगा, मानवता मज़बूत होगी।

"सत्यमेव जयते" केवल एक वाक्य नहीं, बल्कि भारतीय जीवन–दर्शन का सार है। यह सत्य, नैतिकता और न्याय की विजय का प्रतीक है। सत्य मनुष्य को महान बनाता है। यह समाज में विश्वास, शांति और सद्भाव स्थापित करता है। इतिहास, धर्म, साहित्य और राष्ट्रीय जीवन–हर क्षेत्र में सत्य का महत्व सर्वोच्च है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम "सत्यमेव जयते" को केवल राष्ट्रीय प्रतीक पर लिखे शब्दों के रूप में न देखें, बल्कि इसे अपने जीवन में उतारें।

यदि प्रत्येक व्यक्ति सत्य का पालन करे, तो एक आदर्श समाज और मज़बूत राष्ट्र का निर्माण संभव है। अंततः यही कहा जा सकता है कि–

सत्य कभी हारता नहीं,
उसकी विजय निश्चित होती है।

मुझे एक गाने की पंक्ति याद हो आती है:

फूल मिले या अंगारे
सच की राहों पर चलता चल....

सम्पर्क सूत्र : डॉ. कंचन बाला,
वरिष्ठ अनुवाद अधिकारी
E-mail: kanchan8bala@gmail.com

भारत-सदियों से मन में रचा बसा

श्री पीयूष श्रीवास्तव

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"

अथार्त

मातृभूमि स्वर्ग से भी अधिक महान है

भारत–एक ऐसा नाम जो केवल भूगोल का नहीं, बल्कि भावनाओं का पर्याय है। यह केवल मानचित्र में अंकित कोई आकृति नहीं, बल्कि अनगिनत अनुभूतियों, स्मृतियों, धरोहरों और संवेदनाओं का वह विशाल महासागर है, जिसमें भारतीयता की अनूठी लहरें युगों से उठती–गिरती रही हैं। संसार के कई राष्ट्र समय के साथ बदलते इतिहास और सीमाओं का परिणाम होते हैं, परंतु भारत सदियों से अपने अस्तित्व को निरंतर रचे–बसे रूप में जीता आया है। यहाँ की संस्कृति, दर्शन, आध्यात्मिकता और दैनिक जीवन की छोटी–छोटी परंपराएँ भी एक विराट और अनूठी भारतीय चेतना का निर्माण करती हैं।

भारत का परिचय केवल उसके पर्वतों, नदियों, जंगलों या नगरों से नहीं मिलता, बल्कि यहाँ के लोगों की आत्मा से आता है–उनकी बोली, उनके कर्म, उनके आदर्श, उनके सपनों और उनकी अटूट आस्थाओं से।

भारत की आत्मा उसकी सांस्कृतिक गहराइयों में बसती है। यहाँ की संस्कृति स्थिर नहीं, बल्कि प्रवाहमान है–जैसे कोई पवित्र नदी जिसका उद्गम देवताओं की भूमि में होता है और जो समय के साथ अनेक भूभागों को सींचती हुई आगे बढ़ती जाती है। भारतीय संस्कृति में जीवन का प्रत्येक क्षण, प्रत्येक क्रिया, प्रत्येक उत्सव और प्रत्येक पर्व किसी न किसी आध्यात्मिक या सामाजिक अर्थ से जुड़ा हुआ है।

यहाँ दीपावली केवल दीप जलाने का पर्व नहीं, बल्कि अज्ञान के अंधकार से ज्ञान के उजाले की यात्रा है। होली केवल रंगों का खेल नहीं, बल्कि मन के विकारों को जलाकर प्रेम और स्नेह को फिर से जन्म देने का उत्सव है। नवरात्र केवल भक्ति नहीं, बल्कि नारी शक्ति के प्रति सम्मान का गहन भाव है।

भारतीय संस्कृति की सुंदरता यही है कि यह हर व्यक्ति को अपने अनुसार अपनाती है। यहाँ किसी एक रूप, एक भाषा या एक विचार को सर्वोपरि नहीं माना गया। भारत विविधता का सम्मान करते हुए एकता का वटवृक्ष बना है।

भारत का इतिहास किसी एक कालखंड की कहानी नहीं, बल्कि मानव सभ्यता की सबसे प्राचीन और सतत यात्रा का विस्तृत चित्र है।

ऋग्वेद के मंत्रों में बसी प्रकृति–उपासना से लेकर उपनिषदों में व्यक्त गहन दर्शन तक, भारत ने ज्ञान की धारा को निरंतर बहाया है। यह भूमि केवल प्रश्न नहीं पूछती, उत्तर भी स्वयं धारण करती है–मौन में, श्लोकों में, दर्शन में और परंपराओं में।

मौर्य साम्राज्य के चंद्रगुप्त और अशोक ने इस भूमि को केवल राजनीतिक रूप से नहीं, बल्कि नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों से भी समृद्ध किया। गुप्त काल को 'स्वर्ण युग' कहा जाता है, जहाँ कला, साहित्य, विज्ञान और गणित ने नई ऊँचाइयाँ छुईं। आर्यभट, चरक, सुश्रुत,

कालिदास—ये केवल नाम नहीं, बल्कि भारत की बौद्धिक चेतना के स्तंभ हैं।

इस विशाल इतिहास का सबसे सुंदर पहलू यह है कि भारत ने कभी एकरूपता थोपने की कोशिश नहीं की। यहाँ हर युग ने, हर सभ्यता ने, हर समुदाय ने इस भूमि को अपनी–अपनी तरह समृद्ध किया। यही भारत की वास्तविक शक्ति है—विविधता में समृद्धि।

भारत केवल सीमाओं में बँधा राष्ट्र नहीं है। यह एक जीवंत भाव है, एक अनुभव है, जो करोड़ों दिलों में बसता है। विदेश में रहने वाला भारतीय जब अपनी भाषा में बोलता है, घर का बना भोजन खाता है, त्यौहार पूरे मन से मनाता है या अपने परिवार की परंपराओं को अगली पीढ़ी को सौंपता है—तो वह भारत की आत्मा को ही आगे बढ़ा रहा होता है।

कितनी ही बार ऐसा होता है कि कोई व्यक्ति वर्षों विदेश में रहकर भी अपने भीतर बसे भारत को नहीं भूल पाता। क्योंकि भारत भूगोल से अधिक 'भाव' है।

यह भाव पीढ़ियों को आपस में जोड़ता है।

भारत की भाषाएँ केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि संवेदनाओं की अभिव्यक्ति हैं।

संस्कृत की गूंजती हुई गहनता, हिंदी की सरल आत्मीयता, बांग्ला की मिठास, तमिल की प्राचीनता, मराठी की दृढ़ता, पंजाबी की ऊर्जा, मलयालम की लय—हर भाषा भारत की आत्मा का एक अलग स्वर है।

किसी भारतीय के लिए भाषा केवल शब्द नहीं, बल्कि पहचान होती है। यही कारण है कि विदेश में रहने वाला भारतीय अपने बच्चे को अपनी मातृभाषा के दो शब्द भी सिखा दे, तो उसे लगता है कि वह अपने घर की मिट्टी को साथ लेकर चल रहा है।

भारत की महानता केवल उसकी भौतिक उपलब्धियों में नहीं, बल्कि उसकी आध्यात्मिक दृष्टि में निहित है।

यह वह भूमि है जहाँ मनुष्य को 'अहं' से ऊपर उठकर 'हम' का अनुभव करने की शिक्षा दी गई।

भारतीय दर्शन में जीवन केवल भौतिक यात्रा नहीं, बल्कि आत्मिक उन्नति है। यही कारण है कि यहाँ योग, ध्यान, आयुर्वेद, करुणा, त्याग और सह–अस्तित्व जीवन का स्वाभाविक हिस्सा रहे हैं।

भारत का हर क्षेत्र, हर गाँव, हर नगर अपनी अनूठी लोककथाएँ और स्मृतियाँ रखता है।

कहीं पंचतंत्र की बुद्धिमत्ता है, तो कहीं महाभारत और रामायण के आदर्श;

कहीं कबीर की वाणी, तो कहीं मीरा की भक्ति;

कहीं ताजमहल का सौंदर्य, तो कहीं कोणार्क, अजंता, एलोरा का कला–वैभव।

भारत का सांस्कृतिक खजाना इतना विशाल है कि इसे किसी एक किताब या एक दृष्टि में समेटा ही नहीं जा सकता। यह एक अनंत यात्रा है–जो जितना खोजो, उतना गहरा और विस्तृत मिलता है।

आज का भारत तेजी से बदल रहा है। तकनीक, विज्ञान, नवाचार, शिक्षा और आर्थिक विकास के क्षेत्र में भारत विश्व में मजबूत स्थान बना रहा है। फिर भी, इस विकास की दौड़ में भारत ने अपने मूल्यों को नहीं छोड़ा। परिवार आज भी समाज की सबसे मजबूत इकाई है संस्कृति आज भी जीवन का आधार है। निष्ठा, सहयोग, सम्मान– ये मूल्य आज भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं। यही संतुलन भारत को आधुनिक होते हुए भी भारतीय बनाए रखता है।

संपर्क सूत्रः श्री पीयूष श्रीवास्तव,
सहायक फोटोग्राफर, एन.एस.डी.
E-mail: piyush.srivastava571@gmail.com

गाँव की माटी में बसा भारत

श्री बुद्धिसागर मिश्रा

"वसुधैव कुटुम्बकम्" का अर्थ है ''पूरी पृथ्वी एक परिवार है'', जो सभी मनुष्यों को एक ही वैश्विक परिवार का हिस्सा मानता है और समानता, भाईचारे, करुणा व वैश्विक सद्भाव पर ज़ोर देता है।

भारत, हर हिन्दुस्तानी के मन में बसता है। भारत की आत्मा गाँवों में बसती है, भारत का सच्चा स्वरूप उसके गाँवों में निहित है, जहाँ पारंपरिक संस्कृति, जीवन–शैली, त्यौहार आज भी जीवित हैं। हालांकि शहरीकरण के कारण गाँवों की तस्वीर भी बदली है। "भारत का दिल और आत्मा दोनों गाँवों में बसती हैं" भारत की वास्तविक पहचान, संस्कृति और अर्थव्यवस्था उसके ग्रामीण क्षेत्रों में निहित है, जब तक हम अपने गाँव का विकास नहीं करेंगे तब तक भारत का सही मायने में विकास नहीं हो पाएगा। यहाँ की सादगी, परंपराएँ और कृषि–पर आधारित जीवन देश की सच्ची भावना को दर्शाते हैं, और गाँवों का विकास ही देश के संपूर्ण विकास का आधार है।

भारत की विशाल आबादी का एक बड़ा हिस्सा गाँवों में ही रहता है, और गाँवों में ही हमारी प्राचीन संस्कृति, परंपराओं, लोककलाओं और उत्सवों को सहेज कर रखा गया है। लंबे समय तक भारतीय अर्थव्यवस्था का मुख्य आधार कृषि और ग्रामीण उद्योग रहा है, जो ग्रामीण जीवन को सशक्त बनाते हैं।

भारत को आत्मनिर्भर बनाने के लिए ग्राम स्वराज– "स्वराज" शब्द का अर्थ है अपना शासन या कह सकते हैं स्वयं का राज इसलिए कहा गया है कि गाँवों में स्वशासन जरूरी है, जहाँ पर पंचायतें सशक्त हों और गाँव अपनी जरूरतों के लिए किसी पर निर्भर न हो, आत्मनिर्भर हों। शहरों का विकास तो दिन–प्रतिदिन होता जा रहा है। चाहे वह पानी, सड़क, बिजली, स्कूल, कॉलेज, अस्पताल हो, उनकी संख्या दिन–प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। परंतु यह सब विकास गाँवों के विकास के बिना अधूरा है, और वास्तविक राष्ट्रीय विकास गाँवों के सशक्तिकरण से ही संभव है। लेकिन सच्चाई यही है कि दशकों तक गाँवों को उनके हालात पर छोड़ दिया गया। पिछले 6 वर्षों में गाँव के कई इलाकों में धीरे–धीरे सुधार हुए हैं। वहाँ पर बिजली, पानी, गैस, ग्राम पंचायतों के माध्यम से गाँवों के मुद्दों पर ध्यान दिया जाता है ताकि गाँव में रहने वाले लोगों का उचित विकास हो सके। हमने एक के बाद एक कई कामों को शुरू किया जो कि भारत की गहरी सांस्कृतिक जड़ों और पारंपरिक मूल्यों की ओर इशारा करते हैं, जो अक्सर ग्रामीण जीवन में पाए जाते हैं। पुराने समय से ही गाँव भारतीय सभ्यता का केंद्र रहे हैं, जहाँ संस्कृति, परंपराएँ और लोक कलाएँ पीढ़ी–दर–पीढ़ी जीवित रखी गई हैं। आज भी, भारत के कई गाँव प्रकृति की गोद में हैं और शहरी जीवन के प्रदूषण से दूर हैं, जहाँ लोग एक शांत और पारंपरिक जीवनशैली जीते हैं।

एक नया विकसित और खुशहाल भारत बनाना है मुझे,
एक नया भारत दिखे जिसमें मुझे, एक नया विश्वास हो जिसमें,
जिसकी आँखों के अंदर चमक निराली हो,
एक नई उमंग उल्लास से भरी दिखाई देती हो,
बढ़ रहे प्रगतिशील देश की ओर हम,
अब, जिस रफ्तार से
कर रहा हमको नमन, पूरा विश्व भी उस पार से
पर अधूरी है विजय,
जब तक कोई गाँव या शहर गरीबी में है यहाँ
मुक्त करना है मुझे मेरे देश को इस गरीबी की मार से।
नंगे बदन जो सोते रहें इस धरा पर,
खाने के लिए रोटी–रोटी को जो तरसते रहे
एक नया विकसित और खुशहाल भारत बनाना है मुझे
एक नया विकसित और खुशहाल भारत बनाना है मुझे.....

गाँवों का जीवन, लोकगीत, परंपराओं और मेल–जोल की संस्कृति पर आधारित होता है, लोकगीत, परंपराएँ और मेलजोल की संस्कृति एक दूसरे से गहराई से जुड़े हैं गाँव की सादगी, प्रकृति से जुड़ाव, त्यौहार, विवाह जैसे रीति–रिवाज और सामाजिक रिश्ते लोकगीतों, फसल, कजरी के जरिए जीवंत होते है, जहाँ सामूहिक गायन, नाच और मौखिक परंपराएँ जैसे गरबा, रसिया सामाजिक एकजुटता और सांस्कृतिक पीढ़ी तक पहुँचाती हैं। देखा जाता है कि ग्रामीण जीवन अक्सर सरल होता है, प्रकृति के बेहत करीब और कृषि पर यह मुख्य रूप से केंद्रित होता है। जहाँ मौसम, खेल खलिहान, और दैनिक जीवन की कहानियाँ लोकगीतों का हिस्सा बनती हैं। गाँव में परिवार, रिश्तेदार और पड़ोसी मिलकर रहते हैं, एक–दूसरे के कामों में मिलकर हाथ बँटाते हैं शादी हो या कोई उत्सव सब मिल जुल कर काम करते हैं। जिससे आपसी मेलजोल और सहयोग की भावना प्रबल होगी है, जो उनके गीतों और उत्सवों में दिखती है। लोकगीत आम जनता के गीत होते हैं जो जन्म, विवाह, त्यौहार, प्रेम, बिरह, खुशी और दुःख जैसी मानवीय भावनाओं को संगीतमय रूप देकर अपनी बातों को लोगों तक पहुँचाते हैं। ये गीत शास्त्रीय बंधन से मुक्त होते हैं और मौखिक रूप से एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचते हैं, जिनमें अक्सर थोड़ा बहुत बदलाव आता रहता है।

लोकगीत अक्सर अकेले नहीं, बल्कि दल बनाकर गाए जाते हैं, जिससे लोगों के बीच जुड़ाव बढ़ता है जैसे होली के रसिया या कजरी, शादी–ब्याह, जन्म, होली–दिवाली जैसे अवसरों पर विशेष लोकगीत और नृत्य होते हैं जो समुदाय के संस्कारों को दर्शाते हैं जैसे हिमाचल का कुजड़ी, गुजरात का गरबा। उड़ीसा के गाँवों की संस्कृति त्यौहारों, लोक कलाओं–जैसे पटचित्र, छाया कठपुतली, और प्रकृति से गहरे जुड़ाव पर

आधारित है, जहाँ लोग साधारण जीवन जीते हुए भी पारंपरिक संगीत, भजन, चंपू नृत्य, ओडिसी, छऊ, घुमरा, नागा नृत्य, और हस्तशिल्प चांदी के बारीक काम के माध्यम से अपनी समृद्ध विरासत को संजोते हैं, जिसमें रथ यात्रा, नुआखाई जैसे उत्सव प्रमुख हैं और हर घर में कला की झलक ताड़पत्रों और कपड़ों पर की जाने वाली चित्रकारी प्रसिद्ध है। ग्रामीण जीवन खेती और प्रकृति के

साथ तालमेल बिठाकर चलता है, जहाँ लोग साधारण भोजन तथा रिश्तों में खुशियाँ ढूंढते हैं और आपस में विभिन्न धर्मों के लोग साथ मिलकर त्यौहार मनाते हैं।

गाँवों के हस्त कारीगरों को भी बढ़ावा दिया जाता है ताकि गाँव के लोगों का अधिक से अधिक विकास हो सके और उन्हें वहीं रहकर अपने काम के माध्यम से रोज़गार प्राप्त हो सके जिससे उनकी जीविका का निर्वाहन हो सके जैसे कुश की टोकरी बनाना, बाँस से पंखे, खिलौने बनाना, नेचुरल तरीके के कपड़ों पर पेंटिंग करना आदि। इसी तरह झारखंड की हस्तकला में प्राकृतिक संसाधनों जैसे बांस, लकड़ी, मिट्टी और धातु का उपयोग होता है, जैसे **डोकरा कला–** यह धातु ढलाई की एक प्राचीन कला है, जिसमें मोमनिर्मित मॉडल के आधार पर पीतल और अन्य धातुओं से सुंदर मूर्तियाँ और सजावटी सामान बनाए जाते हैं। **पाइकर चित्रकला–** यह पारंपरिक रूप से संथालों और पहाड़ियों द्वारा बनाई जाती है। **सोहराई और कोहबर कला–** यह हज़ारीबाग क्षेत्र की एक लोकप्रिय भित्ति चित्रकला है, जिसे नीम की चबाई हुई डंडियों से बनाया जाता है। **बांस शिल्प–** कारीगर बांस और बेंत से टोकरियाँ, चटाई, फर्नीचर और अन्य घरेलू सामान बनाते हैं। **टसर सिल्क–** कुचाई क्षेत्र अपने टसर सिल्क के लिए प्रसिद्ध है, और पत्थर की नक्काशी झारखंड की घनी वन संपदा के कारण लकड़ी के काम और पत्थर की नक्काशी का भी प्रचलन है, जिससे घरेलू और सजावटी वस्तुएँ बनती हैं। ये प्रमुख कलाएँ हैं, जो आदिवासी समुदायों की समृद्ध संस्कृति और परंपराओं को दर्शाती हैं, जिनमें रंगीन वस्त्र, आभूषण और दैनिक उपयोग की वस्तुएँ शामिल हैं। ऐसे ही भारत के बहुत से राज्य हैं जिनकी हस्तकलाएँ बहुत ही प्रसिद्ध हैं।

तमिलनाडु के गाँवों की संस्कृति प्राचीन परंपराओं, द्रविड़ विरासत, भव्य मंदिरों और कलात्मक जीवनशैली का अनूठा मिश्रण है, जहाँ कृषि, स्थानीय देवी, पारंपरिक खोल, देवताओं की पूजा, मिट्टी के बर्तनों का हस्तशिल्प, और भरताट्यम व शास्त्रीय संगीत का गहरा प्रभाव दिखता है और लोग साधारण जीवन जीते हुए अपनी समृद्ध संस्कृति को संजोते हैं। सरल और स्वादिष्ट स्थानीय भोजन, जिसमें चावल,

सांभर, रसम और नारियल की चटनी मुख्य होती हैं। गाँव संयुक्त परिवारों और सामुदायिक जुड़ाव पर केंद्रित होते हैं जहाँ हर गली–नुक्कड़ पर संस्कृति की झलक मिलती है, जैसे हर घर या दुकान के आगे उनकी पारम्परिक रंगोली देखने को मिल जाएगी।

तमिलनाडु के गाँव अपनी जड़ों से जुड़े एक–दूसरे का समर्थन करते हैं, प्रकृति के करीब और परंपराओं से समृद्ध जीवनशैली जीते हैं।

पंजाब का भाँगड़ा, लोहड़ी का त्यौहार, मक्के की रोटी–सरसों का साग पूरे भारत में मशहूर है। अब केरल के गाँवों की संस्कृति प्रकृति, परंपरा और सादगी के खूबसूरत संगम के बारे में जितना कहा जाए उतना कम है, जहाँ नारियल के पेड़, हरे भरे खेत, शांत बैकवाटर और पारंपरिक घर नालुकेट्टू (चारों ओर आँगन वाले घर) दिखते हैं, जैसी पारंपरिक घर वास्तुकला प्राकृतिक प्रकाश और हवा के लिए जानी जाती है। यहाँ के लोग ओणम जैसे त्यौहार मनाते हैं। कथकली और रानी परंपराओं का पालन करते हैं, और परिवार को महत्व देते हैं।

मोहिनीअट्टम जैसी कलाओं का अभ्यास करते हैं और कृषि, मछली पकड़ने, हस्तशिल्प, नारियल के रेशों से बनी चीज़ें बनाने जैसे कामों मे लगे रहते हैं। लोग सादा जीवन जीते हैं, सदियों पुरानी परंपराओं का पालन करते हैं, और परिवार को महत्व देते हैं।

पहाड़ी इलाकों के गाँवो के बारे में बात करें तो ये अपनी अनूठी भौगोलिक स्थिति, स्थानीय संसाधनों और पारंपरिक जीवन शैली के कारण खास होते हैं, जहाँ घर लकड़ी पत्थर के बने होते हैं, छतें ढलानदार होती हैं और सीढ़ीदार खेत प्राकृतिक सुंदरता बढ़ाते हैं, लेकिन ये भूस्खलन और बाढ़ जैसी आपदाओं के प्रति संवेदनशील होते हैं। ये गाँव ढलानों पर बसे होते हैं, जहाँ समतल ज़मीन कम होती है। घर अक्सर स्थानीय लकड़ी और पत्थर से बनते हैं जो पर्यावरण के अनुकूल होते हैं।

छतों का ढलान बारिश/बर्फ के लिए होता है। यहाँ के लोग प्रकृति से गहराई से जुड़े होते हैं, उनकी अपनी स्थानीय भाषाएं जैसे गढ़वाली और कुमाऊँनी लोक परंपराएँ होती हैं, जो सरल जीवन शैली को दर्शाती हैं। घने जंगल, वन्यजीव, बर्फ से ढकी चोटियाँ जैसे नंदा

देवी, और मनमोहक परिदृश्य इन गाँवों को स्वर्ग जैसा बनाते हैं। सीढ़ीदार खेत यहाँ की मुख्य पहचान हैं, जो कि यहाँ बहुत प्रसिद्ध हैं। यहाँ पानी को इक्क्ट्ठा करके खेती की जाती है। जहाँ हिमनद के पानी या नहरों से सिंचाई होती है।

ऐसे ही भारत के न जाने कितने सुंदर, मनमोहक और खुबसूरत गाँव हैं जिनके बारे में लिखने बैठें तो काग़ज़ कम पड़ जाएगा पर उनकी विशेषता, वैभव कभी कम नहीं होंगे और न ही कभी लिखना खत्म हो पाएगा। उनकी बारीकियों को जब तक आप स्वयं नहीं अनुभूत करते, तब तक आप उस अनुभव को नहीं समझ सकते हैं।

संपर्क सूत्रः श्री बुद्धिसागर मिश्रा, पूर्व सहायक, एन.एस.डी.
E-mail: sagarbudhi27@gmail.com

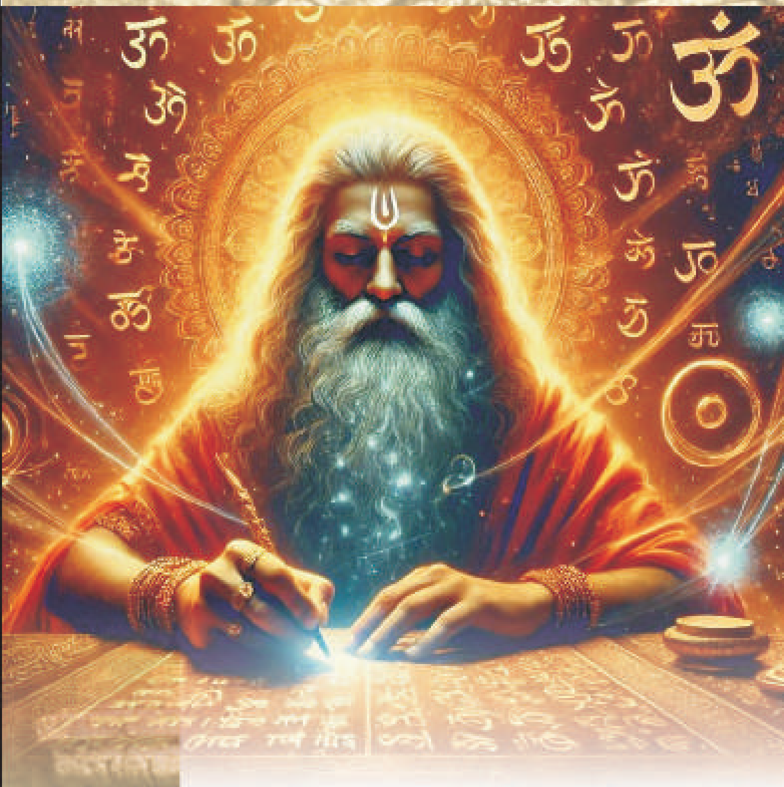

भारतीय ज्ञान परंपरा: विश्व मानवता को दिशा देने वाली अमूल्य धरोहर

श्री ओमप्रकाश सागर

भारत प्राचीन काल से ही ज्ञान, संस्कृति और आध्यात्मिक चेतना का केंद्र रहा है। यहाँ की ज्ञान परंपरा केवल पुस्तकों तक सीमित नहीं रही, बल्कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में व्याप्त रही है। भारतीय ज्ञान परंपरा ने मानव जीवन को केवल भौतिक दृष्टि से नहीं, बल्कि मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक स्तर पर भी समृद्ध करने का कार्य किया है।

विश्व की प्राचीन सभ्यताओं में भारतीय सभ्यता का विशेष स्थान है। वेद, उपनिषद, पुराण, रामायण, महाभारत, आयुर्वेद, योग, ज्योतिष, गणित, नाट्यशास्त्र और दर्शन जैसे अनेक ज्ञान–विषयों ने भारत को "विश्वगुरु" की पहचान प्रदान की। भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल उद्देश्य केवल जानकारी देना नहीं, बल्कि मनुष्य को जीवन का सही मार्ग दिखाना रहा है।

आज जब पूरा विश्व मानसिक तनाव, पर्यावरण संकट, हिंसा और भौतिकतावाद की समस्याओं से जूझ रहा है, तब भारतीय ज्ञान परंपरा की प्रासंगिकता और भी बढ़ जाती है। योग, ध्यान, आयुर्वेद और भारतीय दर्शन आज विश्वभर में सम्मान प्राप्त कर रहे हैं।

भारतीय ज्ञान परंपरा से आशय उस विशाल बौद्धिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विरासत से है जो हज़ारों वर्षों से भारत में विकसित हुई। यह परंपरा गुरु–शिष्य संबंध, अनुभव, चिंतन और व्यावहारिक जीवन पर आधारित रही है। भारतीय ज्ञान केवल सैद्धांतिक नहीं, बल्कि जीवनोपयोगी रहा है। इसमें–धर्म, दर्शन, विज्ञान, चिकित्सा, कला, साहित्य, संगीत, नाट्य, गणित, खगोल विज्ञान जैसे अनेक विषय शामिल हैं।

भारतीय ज्ञान परंपरा का प्रारंभ वेदों से माना जाता है। वेद संसार के सबसे प्राचीन ग्रंथों में गिने जाते हैं।

चार वेद हैं–ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद

वेद केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि उनमें विज्ञान, प्रकृति, चिकित्सा, संगीत और समाज व्यवस्था से जुड़ी अनेक बातें मिलती हैं। ऋग्वेद में प्रकृति और देवताओं की स्तुतियाँ हैं।

सामवेद संगीत का आधार माना जाता है। अथर्ववेद में चिकित्सा और जीवनोपयोगी ज्ञान मिलता है।

उपनिषद भारतीय दर्शन का महत्वपूर्ण आधार हैं। इनमें आत्मा, परमात्मा, जीवन और ब्रह्मांड के रहस्यों पर विचार किया गया है। उपनिषदों का मुख्य संदेश है–आत्मज्ञान, सत्य, ध्यान, ब्रह्म की अनुभूति। भारतीय ज्ञान परंपरा का सबसे महत्वपूर्ण आधार गुरु–शिष्य संबंध रहा है। प्राचीन समय में विद्यार्थी गुरुकुलों में शिक्षा प्राप्त करते थे। शिक्षा केवल पुस्तकीय ज्ञान तक सीमित नहीं होती थी, बल्कि उनके चरित्र निर्माण, अनुशासन, आत्मनिर्भरता, नैतिकता पर भी विशेष ध्यान दिया जाता था। गुरु को अत्यंत सम्मान दिया गया है–

योग, आहार–विहार, को महत्व दिया जाता है। आज विश्वभर में आयुर्वेद और प्राकृतिक चिकित्सा लोकप्रिय हो रही है।

योग भारतीय संस्कृति की अमूल्य देन है। महर्षि पतंजलि ने योगसूत्रों के माध्यम से योग को व्यवस्थित रूप दिया। योग केवल व्यायाम नहीं, बल्कि शरीर, मन और आत्मा के संतुलन का मार्ग है। योग से मानसिक शांति, शारीरिक स्वास्थ्य, आत्मनियंत्रण, तनाव मुक्ति मिलती है। 21 जून को पूरी दुनिया में "अंतरराष्ट्रीय योग दिवस" मनाया जाता है।

भारतीय संस्कृति में प्रकृति को पूजनीय माना गया है। नदियों को माता कहा गया, वृक्षों की पूजा की गई, पर्वतों को देवता माना गया, यह परंपरा पर्यावरण संरक्षण का संदेश देती है।

आज जब पूरी दुनिया पर्यावरण संकट से जूझ रही है, तब भारतीय ज्ञान–परंपरा का यह दृष्टिकोण अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाता है।

भारतीय ज्ञान–परंपरा का प्रभाव केवल भारत तक सीमित नहीं रहा। योग विश्वभर में लोकप्रिय है। आयुर्वेद को अंतरराष्ट्रीय पहचान मिल रही है। बौद्ध दर्शन ने एशिया के अनेक देशों को प्रभावित किया। भारतीय गणित और विज्ञान ने आधुनिक विज्ञान को दिशा दी

भारत की "वसुधैव कुटुम्बकम" की भावना पूरी मानवता को एक परिवार मानने का संदेश देती है।

आज का युग तकनीक और भौतिक प्रगति का युग है, लेकिन इसके साथ तनाव, हिंसा और नैतिक संकट भी बढ़ रहे हैं। ऐसे समय में भारतीय ज्ञान परंपरा मानसिक शांति, संतुलित जीवन, नैतिक मूल्य, पर्यावरण संरक्षण का मार्ग दिखाती है। नई शिक्षा नीति में भी भारतीय ज्ञान परंपरा को महत्व दिया जा रहा है।

भारतीय ज्ञान परंपरा अत्यंत समृद्ध होने के बावजूद आज कई चुनौतियों का सामना कर रही है। जैसे–पाश्चात्य

"गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।"

भारत ने गणित और विज्ञान के क्षेत्र में विश्व को अमूल्य योगदान दिया। आर्यभट्ट और ब्रह्मगुप्त जैसे महान गणितज्ञों ने शून्य और दशमलव प्रणाली का विकास किया। आज पूरा विश्व इसी प्रणाली का उपयोग करता है।

भारतीय विद्वानों ने ग्रहों, तारों और ग्रहणों का गहन अध्ययन किया। आर्यभट्ट ने पृथ्वी के घूमने की बात बहुत पहले बता दी थी।

दिल्ली का लौह स्तंभ भारतीय धातु विज्ञान की श्रेष्ठता का उदाहरण है, जो सदियों बाद भी ज़ंगरहित है।

आयुर्वेद भारतीय ज्ञान परंपरा की महान देन है। चरक और सुश्रुत जैसे आचार्यों ने चिकित्सा विज्ञान को नई दिशा दी।

- आयुर्वेद शरीर, मन और प्रकृति के संतुलन पर आधारित है। इसमें प्राकृतिक उपचार जड़ी–बूटियाँ,

जैसे महान ग्रंथ हैं, जिनमें जीवन के विविध आयामों का ज्ञान निहित है। यह परंपरा केवल शिक्षा प्राप्त करने का माध्यम नहीं, बल्कि जीवन को सार्थक, नैतिक और संतुलित बनाने का मार्ग भी दिखाती है। भारतीय ज्ञान परंपरा सत्य, अहिंसा, करुणा, सहिष्णुता और मानव कल्याण के मूल्यों पर आधारित है। योग, आयुर्वेद, ध्यान तथा दर्शन इसके अमूल्य उपहार हैं, जिन्होंने विश्वभर में भारत की पहचान को सुदृढ़ किया है। प्राचीन गुरुकुल व्यवस्था ने ज्ञान को संस्कारों और चरित्र निर्माण से जोड़ा। गणित, खगोल विज्ञान, चिकित्सा और दर्शन के क्षेत्रों में भारत का योगदान अतुलनीय रहा है। प्रकृति और मानव के बीच सामंजस्य स्थापित करने वाली यह परंपरा आज भी विश्व को शांति, सद्भाव, सतत विकास और आत्मबोध का मार्ग दिखाकर मानवता का मार्गदर्शन कर रही है।

संपर्क सूत्रः श्री ओमप्रकाश सागर,
पूर्व उप कुलसचिव, एन.एस.डी.
E-mail: opsagar@gmail.com

प्रभाव और पारंपरिक भाषाओं की उपेक्षा, प्राचीन ग्रंथों का नष्ट होना और युवा पीढ़ी में जागरूकता की कमी। इन धरोहरों के संरक्षण और अध्ययन की आवश्यकता है।

भारतीय ज्ञान परंपरा केवल अतीत की विरासत नहीं, बल्कि वर्तमान और भविष्य के लिए भी मार्गदर्शक है। यह ज्ञान मानव जीवन को संतुलित, नैतिक और आध्यात्मिक बनाने का संदेश देता है।

वेदों से लेकर योग, आयुर्वेद, गणित, दर्शन और नाट्यशास्त्र तक भारत ने विश्व को अमूल्य योगदान दिया है। भारतीय ज्ञान परंपरा का मूल उद्देश्य मानव कल्याण और विश्व शांति है।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी इस महान विरासत को समझें, उसका संरक्षण करें और नई पीढ़ी तक पहुँचाएँ।

यदि भारतीय ज्ञान–परंपरा के मूल्यों को आधुनिक जीवन में अपनाया जाए, तो मानवता एक अधिक शांतिपूर्ण, संतुलित और समृद्ध भविष्य की ओर बढ़ सकती है।

अंत में यह कहते हुए मैं अपने आलेख को विराम देता हूँ कि भारतीय ज्ञान परंपरा विश्व की सबसे प्राचीन, समृद्ध और वैज्ञानिक ज्ञान प्रणालियों में से एक है। इसका आधार वेद, उपनिषद, पुराण, रामायण और महाभारत

प्रकृति और संस्कृति का सुरम्य संगम: सिक्किम

प्रो. (डॉ.) अजय कुमार मिश्रा

सिक्किम भारत के उत्तर–पूर्वी भाग में स्थित एक खूबसूरत पर्वतीय राज्य है। यह अपने प्राकृतिक सौंदर्य, विविध सांस्कृतिक परंपराओं, धार्मिक सहिष्णुता और सांस्कृतिक समन्वय के लिये प्रसिद्ध है। सुदूर उत्तर–पूर्व में बसे इस राज्य को 16 मई 1975 को भारत के 22वें राज्य की मान्यता प्राप्त हुई, और तब से यह भारत का अभिन्न अंग बन गया है।

राज्य का भौगोलिक और सांस्कृतिक महत्व न सिर्फ भारत के लिए बल्कि पूरे हिमालयी क्षेत्र के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह चीन, नेपाल और भूटान की सीमा से सटा हुआ है और रणनीतिक दृष्टि से भी इसका महत्व बहुत अधिक है।

सिक्किम हिमालय की गोद में बसा हुआ एक छोटा परन्तु सुंदर राज्य है। इसका क्षेत्रफल लगभग 7,096 वर्ग किलोमीटर है और यहाँ 60 लाख से कम जनसंख्या निवास करती है।

यह राज्य अपने मनोरम पर्वतीय दृश्यों, ऊंचे–ऊंचे हिमालयी शिखरों, हरे–भरे वनों, शांत झीलों और नदियों के लिये प्रसिद्ध है। यहाँ का कंचनजंघा पर्वत, जो विश्व का तीसरा सबसे ऊँचा पर्वत है, राज्य की शान माना जाता है।

'राज्य का वातावरण अत्यंत विविधतापूर्ण है– यहाँ ऊँचाई के ऊपर–नीचे तापमान और मौसम में तीव्र परिवर्तन होते हैं। इस विविध भौगोलिक चरित्र की वजह से सिक्किम भारत के सबसे जैविक रूप से विविध राज्यों में से एक है।

सिक्किम का इतिहास प्राचीन काल से शुरू होता है जब यह क्षेत्र विभिन्न आदिवासी समुदायों का घर था, विशेषकर लेपचा और भूटिया समुदाय। बाद में यहाँ पर नेपाली समुदाय का भी प्रभाव बढ़ा और राज्य में बहुसांस्कृतिक जनजीवन विकसित हुआ।

इतिहास की प्रमुख बात यह है कि सिक्किम पहले एक स्वतंत्र राजा (चोग्याल) का राज्य था। वर्ष 1950 में इसे भारत के साथ संरक्षित राज्य का दर्जा प्राप्त हुआ, जिसका अर्थ था कि भारत उसकी रक्षा और विदेश नीति

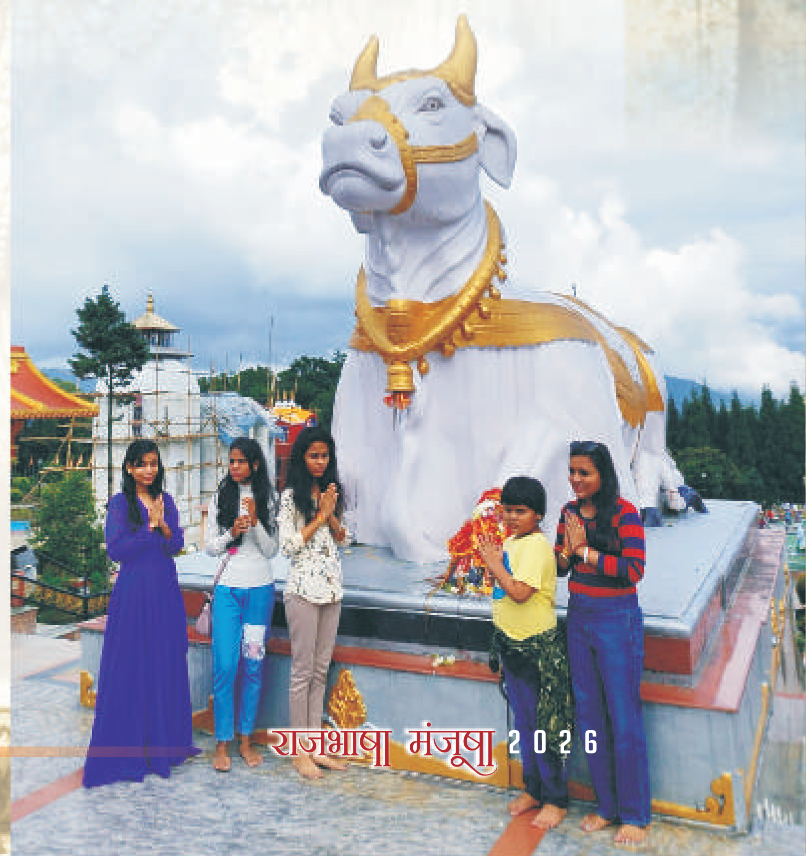

संभालता था। अंततः 16 मई 1975 को सिक्किम को भारत का पूर्ण राज्य घोषित कर दिया गया।

कई इतिहासकारों के अनुसार इस घटना ने भारतीय संघ को राजनीतिक, आर्थिक और सामरिक रूप से और भी मज़बूत किया। सिक्किम की हिमालयी स्थिति ने इसे रक्षा के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण भी बना दिया।

सिक्किम की आबादी विभिन्न जाति–समुदायों से मिलकर बनी है, जिनमें प्रमुख रूप से लेपचा, भूटिया और नेपाली समुदाय शामिल हैं।

इन तीनों समुदायों की अपनी–अपनी परंपराएँ, रीति–रिवाज और सांस्कृतिक आदतें हैं, परंतु फिर भी यहाँ सामाजिक सद्भाव और समन्वय का अद्भुत उदाहरण मिलता है। राज्य में हिंदू, बौद्ध, ईसाई और मुस्लिम धर्मों के लोग आपस में मिलकर रहते हैं और सभी समुदाय अपनी–अपनी धार्मिक मान्यताओं और पूजा–अर्चना का पालन करते हैं।

सामाजिक संरचना में यह विविधता सिक्किम को भारत के अन्य राज्यों से अलग पहचान देती है और यह दर्शाती है कि किस प्रकार विभिन्न संस्कृतियाँ एक साथ शांतिपूर्वक सहअस्तित्व रख सकती हैं।

सिक्किम भाषा की दृष्टि से भी अत्यंत विविध है। यहाँ कई भाषाएँ बोली जाती हैं, पर मुख्य रूप से नेपाली, सिक्किमीज़ (भूटिया) और लेपचा भाषाएँ प्रमुख हैं।

राज्य सरकार ने इन भाषाओं को राज्य की आधिकारिक भाषा के रूप में मान्यता दी है और कई स्थानीय भाषाओं को भी संरक्षित करने के प्रयास किये हैं। यह भाषाई विविधता सिक्किम की संस्कृति को और भी समृद्ध बनाती है।

सिक्किम में धार्मिक सहिष्णुता सबसे प्रमुख चरित्र है। यहाँ विभिन्न धर्मों के अनुयायी रहते हैं और सभी धार्मिक त्योहारों को बड़े उत्साह से मनाया जाता है।

नेपाली समुदाय के कारण हिंदू धर्म का प्रभाव सिक्किम में बहुत है। यहाँ दशहरा, दीपावली (लक्ष्मी पूजा), जन्माष्टमी, शिवरात्रि जैसे त्योहार बड़ी धूम–धाम से मनाए जाते हैं।

किरातेश्वर महादेव मंदिर जैसे मंदिर यहाँ के हिंदुओं के लिये प्रमुख पूजा स्थल हैं।

सिक्किम का बौद्ध संस्कृति पर गहरा प्रभाव रहा है, खासकर भूटिया समुदाय में। यहाँ कई प्राचीन बौद्ध मठ और विहार हैं, जैसे पेमा यांग्त्से मॉनेस्ट्री (Pemayangtse) और ऐन्चे मॉनेस्ट्री (Enchey)।

इन मठों में दिन–प्रतिदिन पूजा–अर्चना होती है और कई धार्मिक अनुष्ठान तथा पारंपरिक नृत्य भी आयोजित किये जाते हैं।

सिक्किम में बड़े–बड़े त्योहार जैसे देश के अन्य भागों के साथ ही उत्साह के साथ मनाये जाते हैं तथा कुछ विशिष्ट स्थानीय पर्व भी मनाए जाते हैं।

– 'लोसोंग (Losoong)–' सिक्किम का पारंपरिक नया साल है, जो मुख्यतः बौद्ध परंपरा के अनुसार मनाया जाता है और यह स्थानीय लोगों की पहाड़ों के साथ जुड़ी परंपराओं का प्रतीक है।

– 'तेन्डोंग ल्हो रुम फाट (Tendong Lho Rum Faat)–' लेपचा समुदाय का प्रमुख त्योहार है, जिसमें पर्वत तेंदोंग के सम्मान में पूजा और त्योहार मनाया जाता है ।

– 'दसैं और दीपावली–' नेपाली समुदाय के प्रमुख हिंदू त्योहार हैं, जो अत्यधिक धूम–धाम से मनाए जाते हैं।

– 'लहबाब दुचेन (Lhabab Duechen)–'बौद्ध धर्मावलंबियों के लिये महत्वपूर्ण है, जो भगवान बुद्ध के धरती पर लौटने की खुशी में मनाया जाता है।

इन त्योहारों के माध्यम से सिक्किम में धार्मिक, सांस्कृतिक और सामाजिक मेलजोल की भावना स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

सिक्किम की संस्कृति का एक अहम हिस्सा वहाँ के लोकनृत्य और संगीत हैं। प्रत्येक समुदाय के पास अपने पारंपरिक नृत्य और संगीत हैं।

नृत्य– जैसे चाम नृत्य बौद्ध मठों में धार्मिक अनुष्ठानों के दौरान किया जाता है और यह सिक्किम की सांस्कृतिक विरासत का मूल्यवान भाग है।

संगीत की बात करें तो यहाँ भूटिया और लेपचा संगीत की अपनी अलग ही पहचान है, जिसमें ढोल, सैंग और दूसरे स्थानीय वाद्य यंत्रों का उपयोग होता है।

सिक्किम की संस्कृति में वहाँ का खान–पान भी एक महत्वपूर्ण भाग है। यहाँ का भोजन हिमालयी परंपरा के अनुसार होता है और इसमें स्थानीय जड़ी–बूटियाँ, अनाज और सब्ज़ियों का व्यापक उपयोग है।

थुक्पा, मोमोज़, चौमेन, फक्थू जैसे व्यंजन सिक्किम के लोगों में बेहद लोकप्रिय हैं।

इन व्यंजनों में मसालों का संतुलित उपयोग होता है, जो पहाड़ी इलाके के अनुसार स्वादिष्ट और पौष्टिक भी होता है।

सिक्किम के पारंपरिक वस्त्र वहाँ के सांस्कृतिक जीवन का अभिन्न हिस्सा हैं। भूटिया महिलाओं द्वारा पहना जाने वाला बखु एक विशिष्ट पारंपरिक वस्त्र है, वहीं नेपाली समुदाय की महिलाएँ फारिया पहनती हैं।

इन पारंपरिक परिधानों में रंग–बिरंगे कपड़े, देशज डिज़ाइन और स्थानीय विशेषता साफ झलकती है, जो उनकी सांस्कृतिक पहचान को मज़बूती देती है।

आज का सिक्किम आधुनिक शिक्षा, स्वास्थ्य–सुविधाओं और आर्थिक विकास की दिशा में तेज़ी से आगे बढ़ रहा है। यहाँ शिक्षा की स्थिति बेहतर है और युवा वर्ग अपनी पहचान बनाने में सक्रिय है।

राज्य सरकार द्वारा स्थानीय भाषाओं के संरक्षण व शिक्षा में वृद्धि के लिये कई योजनाएँ चलाई जा रही हैं, जिससे यहाँ की सांस्कृतिक विरासत और भी ऊँचाई पर पहुँच रही है।

सिक्किम केवल भारत का एक राज्य नहीं है बल्कि यह भारत की विविधता, सहिष्णुता, संस्कृति और प्राकृतिक सौंदर्य का अद्भुत संगम है। विविध भाषाओं, धर्मों, परंपराओं और जीवन शैली के बावजूद यहाँ का सामाजिक समन्वय एक मिसाल है।

यह राज्य न केवल भारत का अभिन्न अंग है बल्कि हमारी संस्कृति और एकता की जीवंत परीक्षा भी है, जो यह दर्शाता है कि विविधता में भी एकता संभव है।

संपर्क सूत्रः प्रो. (डॉ.) अजय कुमार मिश्रा,
कुलपति, सिक्किम कौशल विश्वविद्यालय
E-mail: drajaykumarmishra2109@gmail.com

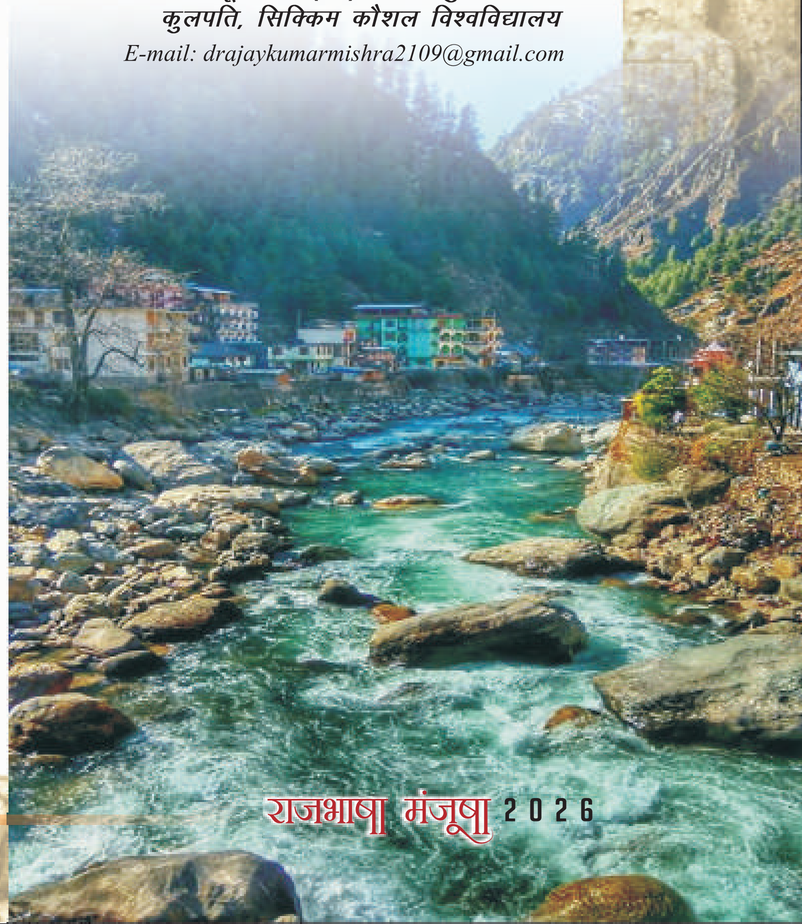

प्राचीन भारतीय कलाएँ: विरासत का दिव्य स्वर

श्री धर्मवीर

भारत विश्व की सबसे प्राचीन और समृद्ध सभ्यताओं में से एक है। यहाँ की संस्कृति केवल धार्मिक या सामाजिक परंपराओं तक सीमित नहीं रही, बल्कि कला के विविध रूपों में भी विकसित हुई। प्राचीन भारतीय संगीत, नृत्य, ललित कला और स्थापत्य भारतीय जीवन–दर्शन, आध्यात्मिकता और सौंदर्यबोध के महत्वपूर्ण आधार रहे हैं।

भारतीय कला का उद्देश्य केवल मनोरंजन नहीं था, बल्कि मानव जीवन को सुंदर, संतुलित और आध्यात्मिक बनाना भी था। हमारे ऋषि–मुनियों ने कला को साधना का माध्यम माना। संगीत को आत्मा की भाषा, नृत्य को भावों की अभिव्यक्ति, चित्रकला को सौंदर्य का दर्शन और स्थापत्य को संस्कृति का स्थायी रूप माना गया।

भारत की प्राचीन कला परंपरा विश्वभर में अपनी मौलिकता, विविधता और आध्यात्मिक गहराई के लिए प्रसिद्ध है। अजंता–एलोरा की गुफाएँ, खजुराहो के मंदिर, भरतनाट्यम और कथक जैसे नृत्य, सामवेद से विकसित संगीत तथा प्राचीन मूर्तिकला आज भी भारतीय संस्कृति की महानता का परिचय देते हैं।

सबसे पहले हम बात शुरु करते हैं संगीत कला से, भारतीय संस्कृति में संगीत को केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि आध्यात्मिक साधना माना गया। कहा जाता है–

हमारा भारतीय संगीत भावप्रधान है। इसमें राग और ताल का विशेष महत्व है। भारतीय संगीत का उद्देश्य श्रोता के मन में भावों का संचार करना है।

प्राचीन भारत में अनेक वाद्य यंत्र प्रचलित थे–वीणा, मृदंग, बांसुरी, शंख, तबला, सितार। भगवान कृष्ण की बांसुरी और देवी सरस्वती की वीणा संगीत की महिमा को दर्शाती हैं।

भक्ति आंदोलन के दौरान संगीत आध्यात्मिक साधना का प्रमुख माध्यम बना। मीरा, सूरदास, तुलसीदास और कबीर जैसे संत कवियों ने भक्ति संगीत को जन–जन तक पहुँचाया।

अब हम बात करते हैं प्राचीन भारतीय नृत्य की।

भारतीय संस्कृति में नृत्य को शरीर, मन और भावनाओं की सुंदर अभिव्यक्ति माना गया है। नृत्य केवल कला नहीं, बल्कि भक्ति और साधना का माध्यम भी रहा है।

भारतीय प्राचीन नृत्य के प्रमुख रूपों पर हम थोड़ा विस्तार से बात करतें हैं।

1. भरतनाट्यम–तमिलनाडु का यह नृत्य अत्यंत प्राचीन और शास्त्रीय है। इसमें भाव, मुद्रा और लय का सुंदर समन्वय दिखाई देता है।

2. कथक–उत्तर भारत का प्रमुख शास्त्रीय नृत्य है। इसकी विशेषता तेज पदचालन और भावपूर्ण अभिनय है।

3. कथकली—केरल का यह नृत्य—नाट्य रूप रंगीन वेशभूषा और चेहरे के विशेष श्रृंगार के लिए प्रसिद्ध है।

4. ओडिसी—ओडिशा का यह नृत्य मंदिर परंपरा से जुड़ा है। इसमें कोमलता और भक्ति का अद्‌भुत मेल दिखाई देता है।

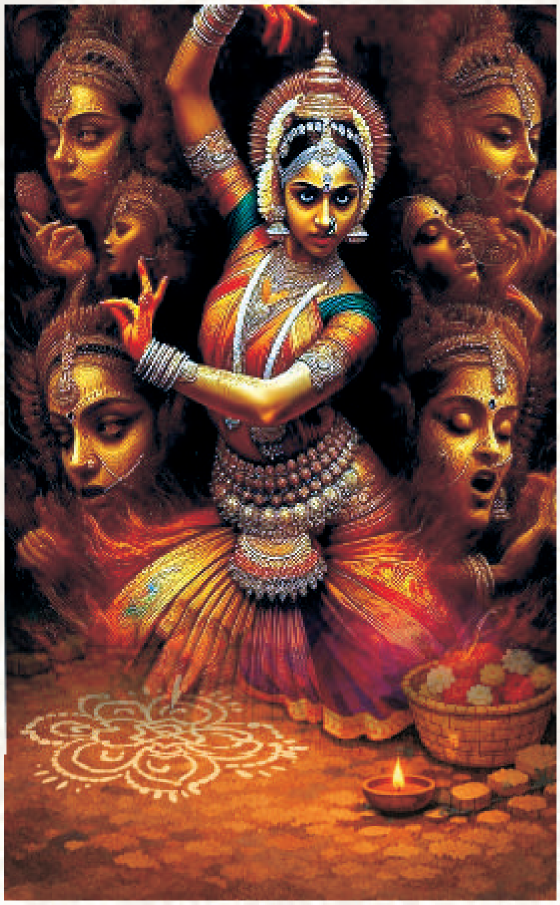

5. मणिपुरी

यह नृत्य भगवान कृष्ण और राधा की रासलीला पर आधारित है। इसमें सौम्यता और आध्यात्मिकता का विशेष महत्व है।

प्राचीन भारत में मंदिर केवल पूजा स्थल नहीं थे, बल्कि कला और संस्कृति के केंद्र भी थे। देवदासी परंपरा और मंदिर नृत्य भारतीय संस्कृति का महत्वपूर्ण भाग थे।

प्राचीन भारतीय ललित कला के बारे में बात करें तो सबसे पहले यह जानना आवश्यक है कि

ललित कला का अर्थ क्या है?

ललित कला से आशय उन कलाओं से है जिनका उद्देश्य सौंदर्य और भावों की अभिव्यक्ति करना होता है। इसमें—चित्रकला, मूर्तिकला, हस्तशिल्प, अलंकरण कला शामिल हैं।

भारतीय चित्रकला अत्यंत प्राचीन और समृद्ध रही है। अजंता की गुफाएँ विश्व प्रसिद्ध भित्तिचित्रों के लिए जानी जाती हैं। इन चित्रों में बुद्ध के जीवन की, समाज और प्रकृति का सुंदर चित्रण मिलता है। एलोरा की गुफाएँ भारतीय कला और स्थापत्य का अद्‌भुत उदाहरण हैं।

ऐसे ही भारतीय मूर्तिकला में आध्यात्मिकता और सौंदर्य का अद्‌भुत समन्वय मिलता है।

अशोक स्तंभ और सिंह शीर्ष मौर्यकालीन मूर्तिकला के श्रेष्ठ उदाहरण हैं। गुप्त काल को भारतीय कला का स्वर्ण युग कहा जाता है। इस काल की बुद्ध प्रतिमाएँ अत्यंत सुंदर और शांत भाव वाली हैं।

भारतीय कलाओं की आगे बात करते हुए भारत की हस्तशिल्प परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। लकड़ी, धातु, मिट्टी और पत्थर पर उत्कृष्ट कला कार्य किए जाते थे।

प्राचीन भारतीय संगीत, नृत्य, ललित कला और स्थापत्य भारतीय संस्कृति की अमूल्य धरोहर हैं। ये केवल कला के रूप नहीं, बल्कि भारतीय जीवन—दर्शन, आध्या—त्मिकता और सांस्कृतिक चेतना के प्रतीक हैं।

संगीत ने आत्मा को स्वर दिया, नृत्य ने भावों को अभिव्यक्ति दी, चित्रकला और मूर्तिकला ने सौंदर्य को आकार दिया तथा स्थापत्य ने संस्कृति को स्थायित्व प्रदान किया।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी इन प्राचीन कलाओं का संरक्षण करें और नई पीढ़ी तक इनके महत्त्व को पहुँचाएँ।

यदि भारतीय कला और संस्कृति की इन परंपराओं को सही रूप में समझा और अपनाया जाए, तो वे मानव जीवन को अधिक सुंदर, संतुलित और आध्यात्मिक बना सकती हैं।

अंततः कहा जा सकता है कि प्राचीन भारतीय कला केवल भारत की नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानवता की साझा सांस्कृतिक धरोहर है।

संपर्क सूत्रः श्री धर्मवीर, सहायक कुलसचिव (शैक्षिक)
E-mail: dharamsagar77@gmail.com

वृक्ष पूजाः प्रकृति, आस्था और जीवन का अद्भुत समन्वय

सुश्री दीपा जोशी

भारतीय संस्कृति में प्रकृति को सदैव पूजनीय माना गया है। यहाँ नदियों, पर्वतों, पशु–पक्षियों और वृक्षों तक में दिव्यता का अनुभव किया जाता है। हिन्दू परंपरा में वृक्ष केवल प्रकृति का हिस्सा नहीं हैं, बल्कि जीवनदाता, संरक्षक और देवतुल्य माने जाते हैं। इसी कारण भारत में प्राचीन समय से वृक्ष पूजा की परंपरा चली आ रही है।

वृक्ष मानव जीवन के आधार हैं। वे हमें शुद्ध वायु, फल, फूल, औषधियाँ, छाया और पर्यावरण संतुलन प्रदान करते हैं। भारतीय ऋषि–मुनियों ने बहुत पहले ही यह समझ लिया था कि प्रकृति के बिना जीवन संभव नहीं है। इसलिए उन्होंने वृक्षों को धर्म और संस्कृति से जोड़कर उनके संरक्षण का मार्ग अपनाया।

हिन्दू धर्म में पीपल, बरगद, तुलसी, बेल, नीम, आँवला और केले जैसे अनेक वृक्षों को विशेष धार्मिक महत्व दिया गया है। इन वृक्षों की पूजा केवल आस्था का विषय नहीं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण और जीवन संतुलन की गहरी भावना से जुड़ी हुई है।

आज जब पूरी दुनिया पर्यावरण संकट और जलवायु परिवर्तन जैसी समस्याओं से जूझ रही है, तब हिन्दू परंपरा की वृक्ष पूजा मानवता को प्रकृति के प्रति सम्मान और संरक्षण का महत्वपूर्ण संदेश देती है।

हिन्दू धर्म का मूल आधार प्रकृति के साथ सामंजस्य है। वेदों और उपनिषदों में प्रकृति को ईश्वर का स्वरूप माना गया है।

ऋग्वेद में पृथ्वी, वायु, अग्नि, जल और आकाश की स्तुति की गई है। भारतीय संस्कृति में यह विश्वास है कि सम्पूर्ण सृष्टि में एक ही दिव्य चेतना विद्यमान है। इसी कारण वृक्षों को भी जीवन और देवत्व का प्रतीक माना गया।

भारतीय परंपरा में कहा गया है–

"वृक्षो रक्षति रक्षितः"

अर्थात् जो वृक्षों की रक्षा करता है, वृक्ष उसकी रक्षा करते हैं।

भारत में प्राचीन समय से वृक्षों की पूजा की जाती रही है। गाँवों और नगरों में मंदिरों के पास वृक्ष लगाए जाते थे। कई स्थानों पर वृक्षों को देवताओं का निवास माना जाता था।

वृक्ष पूजा के पीछे दो प्रमुख भावनाएँ थीं–प्रकृति के प्रति कृतज्ञता और पर्यावरण संरक्षण।

यह परंपरा समाज को यह सिखाती थी कि वृक्षों का सम्मान करना आवश्यक है क्योंकि वे जीवन का आधार हैं।

पीपल वृक्ष का महत्व

पीपल हिन्दू धर्म में अत्यंत पवित्र माना जाता है। इसे भगवान विष्णु का स्वरूप माना गया है। शनिवार और अमावस्या के दिन पीपल की पूजा की जाती है। इसकी परिक्रमा करने की परंपरा है। कई धार्मिक अनुष्ठानों में पीपल के पत्तों का उपयोग होता है।

पीपल वृक्ष अधिक मात्रा में ऑक्सीजन प्रदान करता है और पर्यावरण को शुद्ध करता है। इस प्रकार धार्मिक आस्था के माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का संदेश दिया गया।

बरगद वृक्ष

बरगद दीर्घायु और स्थिरता का प्रतीक माना जाता है। हिन्दू महिलाएँ वट सावित्री व्रत के दिन बरगद वृक्ष की पूजा करती हैं। यह व्रत सावित्री और सत्यवान की कथा से जुड़ा है। बरगद वृक्ष की विशाल जड़ें और लंबी आयु इसे अमरता और परिवार की स्थिरता का प्रतीक बनाती हैं।

तुलसी का महत्व

तुलसी हिन्दू घरों में विशेष स्थान रखती है। इसे देवी लक्ष्मी का रूप माना जाता है। पूजा–पाठ में तुलसी दल का उपयोग होता है। भगवान विष्णु को तुलसी अत्यंत प्रिय मानी जाती है। तुलसी विवाह की परंपरा भी प्रचलित है।

औषधीय महत्व

तुलसी औषधीय गुणों से भरपूर है। यह रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाती है और अनेक बीमारियों में लाभकारी होती है।

बेल वृक्ष

बेल का हिन्दू धर्म में विशेष महत्व है। भगवान शिव को बेलपत्र अत्यंत प्रिय माना जाता है। शिव पूजा में बेलपत्र अर्पित करना शुभ माना जाता है। बेल वृक्ष औषधीय दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी है। इसके फल और पत्तियाँ स्वास्थ्य के लिए लाभकारी हैं।

नीम वृक्ष का महत्व

नीम को भारतीय संस्कृति में स्वास्थ्य और सुरक्षा का प्रतीक माना गया है। कई स्थानों पर नीम की पूजा की जाती है। इसे रोगों से रक्षा करने वाला वृक्ष माना जाता है।

वैज्ञानिक महत्व

नीम में ऐंटीबैक्टीरियल और औषधीय गुण पाए जाते हैं। यह पर्यावरण को शुद्ध रखने में भी सहायक है।

आँवला वृक्ष

आँवला को भी हिन्दू धर्म में पवित्र माना गया है। आँवला नवमी के दिन इसकी पूजा की जाती है। इसके अतिरिक्त –केला, नारियल, अशोक, चंदन, जैसे वृक्ष भी धार्मिक महत्व रखते हैं।

भारतीय त्योहारों में वृक्षों और पौधों का विशेष महत्व दिखाई देता है।

दीपावली में आम और अशोक के पत्तों का उपयोग, गणेश पूजा में दूर्वा और पत्तियाँ, विवाह में केले के वृक्ष, नवरात्रि में जौ बोने की परंपरा ये सभी प्रकृति और संस्कृति के गहरे संबंध को दर्शाते हैं।

वृक्ष पूजा और पर्यावरण संरक्षण

प्राचीन भारतीय समाज ने वृक्षों के महत्व को समझते हुए उन्हें धर्म से जोड़ दिया। इससे लोग वृक्षों को काटने से बचते थे और उनका संरक्षण करते थे। आज आधुनिक विज्ञान भी यह मानता है कि–वृक्ष जलवायु संतुलित रखते हैं, वर्षा में सहायक होते हैं, मिट्टी का कटाव रोकते हैं, प्रदूषण कम करते हैं, इस प्रकार हिन्दू परंपरा की वृक्ष पूजा पर्यावरण संरक्षण का प्राचीन और प्रभावी माध्यम रही है।

आयुर्वेद में वृक्षों और पौधों का विशेष महत्व है। अनेक औषधियाँ वृक्षों से प्राप्त होती हैं। नीम, तुलसी, आँवला, बेल, चंदन इनका उपयोग प्राचीन चिकित्सा पद्धति में किया जाता रहा है।

आज पृथ्वी ग्लोबल वार्मिंग, प्रदूषण और जंगलों की कटाई जैसी समस्याओं का सामना कर रही है। ऐसे समय में हिन्दू परंपरा की वृक्ष पूजा हमें यह सिखाती है कि प्रकृति का सम्मान करना मानव जीवन के लिए आवश्यक है। यदि हम वृक्षों की रक्षा नहीं करेंगे, तो–जल संकट बढ़ेगा, प्रदूषण बढ़ेगा, जलवायु असंतुलित होगी, जीवन संकट में पड़ जाएगा।

वृक्ष पूजा केवल धार्मिक परंपरा नहीं, बल्कि सामाजिक शिक्षा भी है। यह हमें सिखाती है–प्रकृति के प्रति कृतज्ञता, पर्यावरण संरक्षण, सहअस्तित्व, संतुलित जीवन। भारतीय संस्कृति में वृक्षों को परिवार के सदस्य की तरह सम्मान दिया गया है।

हिन्दू परंपरा में वृक्ष पूजा प्रकृति और मानव जीवन के गहरे संबंध का प्रतीक है। वृक्षों को देवतुल्य मानने की परंपरा केवल धार्मिक आस्था नहीं, बल्कि पर्यावरण संरक्षण और जीवन संतुलन की वैज्ञानिक सोच भी है।

पीपल, बरगद, तुलसी, बेल और नीम जैसे वृक्ष भारतीय संस्कृति में विशेष स्थान रखते हैं। ये वृक्ष हमें स्वास्थ्य, शुद्ध वायु, औषधि और मानसिक शांति प्रदान करते हैं।

आज आवश्यकता इस बात की है कि हम अपनी प्राचीन परंपराओं के वास्तविक अर्थ को समझें और वृक्षों के संरक्षण को जीवन का हिस्सा बनाएँ।

सम्पर्क सूत्रः सुश्री दीपा जोशी,
सहायक रजिस्ट्रार (तदर्थ), एन.एस.डी.
E-mail: pantd1980@gmail.com

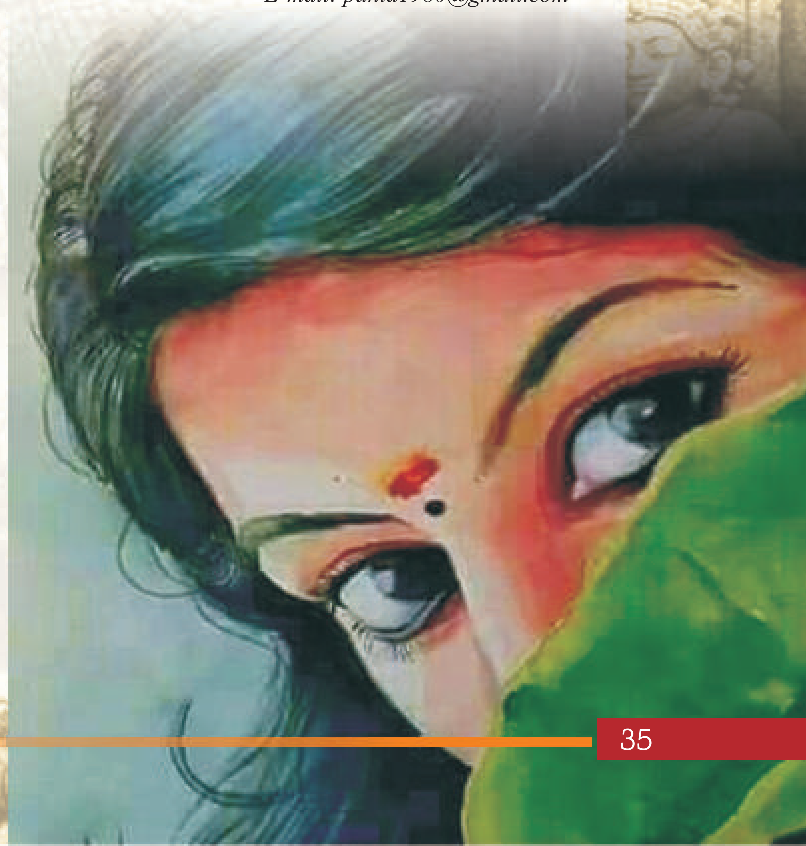

सोन चिरिया

श्री सत्यम कुशवाहा

कण–कण में बलिदान बसा है,
हर मिट्टी में गूँज रही।
भगत, सुखदेव, वीर आजादों की,
गाथा अब भी पूज रही।

झाँसी वाली रानी का साहस,
आज भी दिल में जलता है।
नेताजी का अमर हुंकारा,
हर भारतवासी सुनता है।

सदियों की बेड़ियाँ तोड़कर,
जब आज़ादी का दीप जला।
तब दुनिया ने देखा भारत,
कैसे विपदा में भी पला।

भूख, गरीबी, आँधी, संकट,
सबसे लड़कर आगे बढ़ा।
मेहनत की हर छोटी बूँद ने,
भारत का विश्वास गढ़ा।

खेती की हर हरी फसल में,
किसानों का अरमान बसा।
सीमा पर जो डटे जवान हैं,
उनमें पूरा हिंदुस्तान बसा।

रेगिस्तान से हिमशिखरों तक,
भारत का अभिमान खड़ा।
हर सैनिक के साहस आगे,
झुकता हर तूफान बड़ा।

युवा आँखों में स्वप्न सुनहरे,
हाथों में तकनीक नई।
मेहनत की जलती मशालें,
ले आईं एक सुबह नई।

उगता सूरज, जागा भारत,
नव युग का अब शंख बजे।
ज्ञान, विज्ञान और संस्कृति से
विश्व दिशा की राह सजे।

सदियों की तप, त्याग की गाथा,
फिर से इतिहास सँवार रही।
सोई शक्ति हिमालय जैसी,
अब दुनिया को पुकार रही।

ऋषियों की वह भूमि पुरानी,
जहाँ वेदों का ज्ञान जगा।
जहाँ बुद्ध की करुणा बहती,
जहाँ प्रेम का अमृत पगा।

रामायण की मर्यादा लेकर,
गीता का संदेश लिए।
सत्य, अहिंसा और धर्मों का,
भारत चलता देश लिए।

विद्यालयों की उजली चौखट,
ज्ञान का दीप जलाती हैं।
नई पीढ़ियाँ अपने दम पर,
दुनिया को राह दिखाती हैं।

कंप्यूटर की भाषा सीखें,
अंतरिक्षों में उड़ते हैं।
छोटे–छोटे गाँवों के बच्चे,
अब विज्ञान से जुड़ते हैं।

चंद्रयान जब नभ में पहुँचा,
भारत का अभिमान बढ़ा।
धरती से आकाश तलक अब,
हर पथ पर विश्वास बढ़ा।

जब चाँद की धरती पर जाकर,
भारत ने इतिहास लिखा।
पूरी दुनिया ने माना फिर,
भारत ने नया प्रकाश लिखा।

सूरज जैसी तेज़ प्रगति से,
दुनिया को चकित किया।
मंगलयान की उड़ती गाथा ने,
हर भारतीय को गर्व दिया।

डिजिटल भारत की शक्ति अब,
हर घर तक पहचान बनी।
छोटे हाथों में मोबाइल लेकर,
नई सदी आसान बनी।

रेल, सड़क और नए नगर अब,
विकास की भाषा बोल रहे।
गाँवों के सपनों को लेकर,
नए उजाले डोल रहे।

करुणा, प्रेम, योग, अहिंसा,
भारत की पहचान बने।
"वसुधैव कुटुम्बकम्" का दीपक,
सारे जग की शान बने।

गंगा जैसी पावन धारा,
सबको जीना सिखलाती है।
भारत की संस्कृति दुनिया को,
मानवता का पाठ पढ़ाती है।

मंदिर, मस्जिद, गुरुद्वारों में,
एक ही ईश्वर का वास रहे।
भाषाएँ चाहे अलग–अलग हों,
दिल में भारत खास रहे।

त्योहारों की रंगत ऐसी,
हर मौसम मुस्कान बने।
होली, दीपक, ईद और बैसाखी,
सब मिलकर पहचान बने।

ना केवल खुद आगे बढ़ना,
सबको साथ बढ़ाना है।
"जय जगत" के पावन पथ पर,
मानव धर्म निभाना है।

भारत केवल शक्ति नहीं है,
सेवा का भी नाम बड़ा।
दुखियों के आँसू पोंछे जो,
वह भारत सबसे खरा।

विश्व शांति का संदेश लिए,
भारत आगे चलता है।
टूटे मन में आशा भरकर,
मानवता को संबल देता है।

आत्मनिर्भर सपनों वाला,
नव निर्माण का दौर है।
नई सदी के इस भारत का,
विश्व शिखर पर गौरव है।

कारखानों की नई मशीनें,
रोज़गारों के द्वार खुलें।
मेहनतकश हर हाथ यहाँ पर,
सपनों की तकदीर बुनें।

नारी शक्ति अब आगे बढ़कर,
हर क्षेत्र में नाम करे।
सीमा, विज्ञान और संसद में,
भारत का अभिमान धरे।

बेटी अब निर्भय होकर,
अपने पंख पसार रही।
नई सदी की नई कहानी,
भारत को भी सँवार रही।

पर्यावरण का ध्यान रखेंगे,
नदियाँ स्वच्छ बनाएँगे।
धरती माँ की हर हरियाली,
मिलकर फिर से लाएँगे।

सत्य, श्रम और एकता से,
हर मुश्किल आसान होगी।
भारत की उन्नति की गाथा,
पूरे विश्व में महान होगी।

आओ मिलकर प्रण ये लें हम,
देश का सदा सम्मान रहे।
भारत केवल देश नहीं है,
विश्व मानव की जान रहे।

जब तक सूरज चाँद रहेगा,
भारत का यश गाया जाएगा।
संस्कृति का शाश्वत उत्सव बन यह
हर रोज जश्न मनाएगा।

सम्पर्क सूत्रः श्री सत्यम कुशवाहा,
छात्र (द्वितीय वर्ष), एन.एस.डी.
E-mail: satyamkushwaha8737@gmail.com

इतिहास, संस्कृति और भावनाओं का प्रतिबिंब: भारतीय साहित्य

श्री अमित कुमार

भारत केवल नक्शे पर बना एक देश नहीं है। यह भावनाओं, संस्कृतियों, परंपराओं और आध्यात्मिक विचारों से बना एक विशाल संसार है। यहाँ हज़ारों वर्षों से ज्ञान, कला, दर्शन और साहित्य की समृद्ध परंपरा चली आ रही है। भारत की असली पहचान उसकी संस्कृति में छिपी है, जहाँ परंपराएँ केवल निभाई नहीं जातीं बल्कि जीवन का हिस्सा बनकर जी जाती हैं। लोककथाएँ केवल सुनाई नहीं जातीं, बल्कि लोगों की भावनाओं और अनुभवों से जुड़ जाती हैं। इसी सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विरासत का सबसे सुंदर रूप भारतीय साहित्य में दिखाई देता है। भारतीय साहित्य एक ऐसा दर्पण है जिसमें भारत की सोच, भावनाएँ, संघर्ष, सौंदर्य और दर्शन सभी झलकते हैं।

भारतीय साहित्य की शुरुआत लिखित रूप से नहीं, बल्कि श्रुति परंपरा से हुई। पहले ज्ञान को सुनकर याद किया जाता था और पीढ़ी दर पीढ़ी आगे पहुँचाया जाता था। वेद इसी परंपरा का सबसे प्राचीन उदाहरण हैं। ऋग्वेद को विश्व का सबसे पुराना साहित्यिक ग्रंथ माना जाता है। इसमें प्रकृति, देवताओं, ब्रह्मांड और मानव जीवन के प्रति गहरी श्रद्धा और कृतज्ञता व्यक्त की गई है। इन मंत्रों और प्रार्थनाओं में मनुष्य और प्रकृति के बीच एक गहरा संबंध दिखाई देता है।

वेदों के बाद उपनिषदों ने भारतीय विचारधारा को और गहराई दी। उपनिषदों में जीवन और आत्मा से जुड़े अनेक प्रश्नों पर विचार किया गया है–जैसे आत्मा क्या है, जीवन का उद्देश्य क्या है और ब्रह्म तथा जीव के बीच क्या संबंध है। भारतीय साहित्य की विशेषता यह है कि इसमें केवल कथाएँ ही नहीं हैं, बल्कि गहन दर्शन और चिंतन भी है।

भारतीय साहित्य की महानतम रचनाओं में रामायण और महाभारत का विशेष स्थान है। ये केवल धार्मिक ग्रंथ नहीं हैं, बल्कि जीवन को समझने वाले महान महाकाव्य हैं। रामायण में आदर्श जीवन, मर्यादा, कर्तव्य और करुणा का सुंदर चित्रण मिलता है। इसमें केवल भगवान राम की कथा ही नहीं, बल्कि परिवार, समाज और मानवीय संबंधों की भी गहरी समझ दिखाई देती है।

महाभारत जीवन की जटिलताओं और संघर्षों का महान ग्रंथ है। इसमें बताया गया है कि जीवन में सही निर्णय लेना कितना कठिन हो सकता है। भगवद्गीता में श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्म का महत्व समझाते हैं और कहते हैं कि मनुष्य का अधिकार केवल कर्म करने पर है, फल की चिंता नहीं करनी चाहिए। यह विचार आज भी लोगों को प्रेरणा देता है।

भारतीय साहित्य में नाट्यकला का भी महत्वपूर्ण स्थान है। भरतमुनि का नाट्यशास्त्र नाटक, संगीत, अभिनय और भावों का एक महान ग्रंथ है। इसमें बताया गया है कि मनुष्य की भावनाओं को कला के माध्यम से कैसे व्यक्त किया जा सकता है। श्रृंगार, करुण, वीर, रौद्र और अद्भुत जैसे रस मानव मन की विविध भावनाओं को दर्शाते हैं।

संस्कृत साहित्य की परंपरा भी अत्यंत समृद्ध रही है। कालिदास, भवभूति, भास और बाणभट्ट जैसे महान कवियों ने भारतीय काव्य को नई ऊँचाइयाँ दीं। कालिदास की रचना मेघदूत प्रकृति और प्रेम का अद्भुत संगम है, जिसमें एक यक्ष अपने संदेश को बादल के माध्यम से अपनी प्रिया तक पहुँचाने की कल्पना करता है।

भारतीय साहित्य का एक महत्वपूर्ण भाग लोक साहित्य भी है। पंचतंत्र की कहानियाँ, बेताल पच्चीसी, लोकगीत और वीरगाथाएँ पीढ़ियों से लोगों के बीच जीवित रही हैं। लोक साहित्य की खासियत यह है कि यह आम लोगों के जीवन, उनके अनुभवों, खुशियों और दुखों को सरल भाषा में व्यक्त करता है। इसमें कृत्रिमता नहीं होती, बल्कि जीवन की सच्चाई होती है।

मध्यकाल में भारतीय साहित्य में भक्ति आंदोलन का विशेष प्रभाव दिखाई देता है। कबीर, सूरदास, तुलसीदास, मीरा और गुरु नानक जैसे संत कवियों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से भक्ति, प्रेम और मानवता का संदेश दिया। कबीर ने अपने दोहों में जीवन की सच्चाइयों को सरल शब्दों में बताया। मीरा की भक्ति में प्रेम और समर्पण की गहरी भावना दिखाई देती है। तुलसीदास की रामचरितमानस आज भी करोड़ों लोगों के जीवन का हिस्सा है।

आधुनिक काल में भारतीय साहित्य ने समाज को नई दिशा दी। इस समय साहित्य में स्वतंत्रता, समानता, शिक्षा और सामाजिक सुधार की भावना दिखाई देने लगी। भारतेंदु हरिश्चंद्र को आधुनिक हिंदी साहित्य का जनक माना जाता है। प्रेमचंद ने अपनी कहानियों और उपन्यासों में किसानों और आम लोगों के जीवन के संघर्षों को प्रस्तुत किया। महादेवी वर्मा, निराला और जयशंकर प्रसाद जैसे कवियों ने हिंदी साहित्य को नई संवेदनाएँ और नए विचार दिए।

आज भारतीय साहित्य की पहुँच केवल भारत तक सीमित नहीं रही। इसकी शाखाएँ पूरे विश्व में फैल चुकी हैं। योग, गीता और उपनिषद जैसे ग्रंथों के विचार दुनिया भर में पढ़े और अपनाए जा रहे हैं। रवींद्रनाथ ठाकुर को नोबेल पुरस्कार मिलने से भारतीय साहित्य को विश्व स्तर पर पहचान मिली। आज भारतीय लेखक अनेक भाषाओं में लिखकर विश्व साहित्य को समृद्ध कर रहे हैं।

भारतीय साहित्य केवल शब्दों का संग्रह नहीं है, बल्कि यह हमारी सामूहिक स्मृति और अनुभवों का भंडार है। इसमें हमारे समाज का इतिहास, हमारी भावनाएँ, संघर्ष, परंपराएँ और जीवन के मूल्य सुरक्षित हैं। जब हम साहित्य पढ़ते हैं, तो हम केवल शब्द नहीं पढ़ते, बल्कि हजारों वर्षों की सांस्कृतिक यात्रा से जुड़ते हैं।

इस प्रकार भारतीय साहित्य हमारी पहचान, हमारी जड़ों और हमारी चेतना का आधार है। यह अतीत, वर्तमान और भविष्य को जोड़ने वाली एक ऐसी अमूल्य धरोहर है जो आने वाली पीढ़ियों को भी मार्ग दिखाती रहेगी। क्योंकि सच यही है कि भारत की आत्मा उसके साहित्य में बसती है, और साहित्य ही भारत की आत्मा का सच्चा स्वर है।

सम्पर्क सूत्रः श्री अमित कुमार, प्रवर श्रेणी लिपिक, एन.एस.डी.
E-mail: kumaramitdeep@gmail.com

त्योहारों का उत्सव-भारतीयता का रंगीन स्वरूप

सुश्री इंदु विष्ट

भारत है रंगों का देश,
हर त्योहार यहाँ विशेष।

दीवाली के दीप चमकते,
होली में रंग सब पर छलकते।
ईद लाती गले लगाने की सीख,
क्रिसमस देता प्रेम की दीख।

पोङ्गल में फसलें मुस्काएँ,
बैसाखी सबको खुशियाँ दिलवाएँ।
नवरात्रि में होती आराधना,
दुर्गा पूजा देती साधना।

रक्षाबंधन में प्रेम की डोर,
जन्माष्टमी में कान्हा की होड़।
गणेश चतुर्थी का सुंदर पर्व,
सबके दिल में बढ़ता हर्ष।

वेद–उपनिषद का दिया ज्ञान,
इतिहास देता हमें मान।
"जननी जन्मभूमि महान"–
यह मंत्र बढ़ाता देश का मान।

सम्पर्क सूत्रः सुश्री इंदु विष्ट, कोषाध्यक्ष, एन.एस.डी.
E-mail: indubisht10@gmail.com

गहनों में झलकती भारतीयता

सुश्री कविता मिश्रा

भारतीय संस्कृति अपनी विविधता, परंपराओं और सौंदर्यबोध के लिए विश्वभर में प्रसिद्ध है। यहाँ, आभूषण केवल सजावट या रीति–रिवाज दर्शाने का माध्यम ही नहीं बल्कि सामाजिक, सांस्कृतिक और आध्यात्मिक जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा भी हैं। भारतीय महिलाओं के आभूषणों की परंपरा हज़ारों वर्षों पुरानी हैं। प्राचीन काल से ही स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार के गहने धारण करती आई हैं, जो उनकी सुंदरता के साथ–साथ उनके सांस्कृतिक और सामाजिक महत्व को भी दर्शाते हैं। भारत में आभूषण केवल धन और वैभव का प्रतीक नहीं हैं, बल्कि वे स्त्री की पहचान, वैवाहिक स्थिति, परंपरा और भावनात्मक जुड़ाव का भी प्रतिनिधित्व करते हैं। भारतीय आभूषणों में कला, शिल्प, संस्कृति और विज्ञान का सुंदर समन्वय दिखाई देता है। सोना, चाँदी, मोती, हीरे और विभिन्न रत्नों से बने ये गहने भारतीय जीवनशैली का अभिन्न अंग रहे हैं। आज आधुनिकता के प्रभाव के बावजूद भारतीय आभूषणों की लोकप्रियता और महत्व बना हुआ है।

भारतीय आभूषणों की परंपरा के कुछ तथ्यों के बारे में हम जानते हैं, जैसे भारत में आभूषण पहनने की परंपरा अत्यंत प्राचीन है। सिंधु घाटी सभ्यता की खुदाई में भी अनेक प्रकार के आभूषण प्राप्त हुए हैं। इससे स्पष्ट होता है कि भारतीय समाज में प्राचीन समय से ही आभूषणों का विशेष महत्व रहा है। वैदिक काल, मौर्यकाल और गुप्तकाल में भी स्त्रियाँ विभिन्न प्रकार के गहने धारण करती थीं। मंदिरों की मूर्तियों और प्राचीन चित्रों में भारतीय महिलाओं को सुंदर आभूषणों से सुसज्जित दिखाया गया है। इसी तरह भारतीय संस्कृति में आभूषण केवल फैशन नहीं, बल्कि परंपरा और संस्कार का हिस्सा हैं। विवाह, त्यौहार, धार्मिक अनुष्ठान और सामाजिक अवसरों पर महिलाएँ विशेष आभूषण धारण करती हैं।

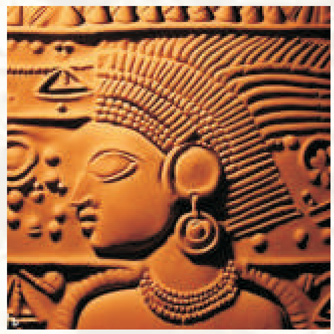

चूड़ियों का महत्व

शादीशुदा हों या अविवाहित, महिलाएं अपनी सुंदरता और आकर्षण बढ़ाने के लिए चूड़ियां पहनती हैं। आज भले ही चूड़ियों को फैशन स्टेटमेंट मान लिया गया हो, लेकिन इनके पीछे गहरे ऐतिहासिक, धार्मिक और वैज्ञानिक कारण छिपे हुए हैं।

चूड़ियों का इतिहास आज का नहीं बेहद पुराना है। मोहनजोदड़ो से मिली कांस्य नर्तकी की मूर्ति (Bronze Dancing Girl) इसका प्रमाण है, जिसके हाथों में चूड़ियां साफ दिखाई देती हैं। इससे स्पष्ट होता है कि हज़ारों साल पहले भी महिलाएं चूड़ियां पहनती थीं। उस

समय की चूड़ियां पत्थर, शंख, मिट्टी, धातु, कांच और सोने–चांदी से बनाई जाती थीं। यही नहीं, प्राचीन काल में देवी–देवताओं की मूर्तियों, यक्षिणियों और यहाँ तक कि संस्कृत ग्रंथ कादंबरी में भी चूड़ियों का उल्लेख मिलता है। बाणभट्ट के 'कादंबरी' में मां सरस्वती को कंगन पहने हुए दिखाया गया है।

हिंदू संस्कृति में विवाहित महिलाओं के लिए चूड़ियां सुहाग का प्रतीक मानी जाती हैं। विवाहित महिलाएं कांच और सोने की चूड़ियां पहनती हैं। इसे पति और संतान के मंगल की कामना से जोड़ा जाता है। इस के वैज्ञानिक कारण की बात करें तो चूडियाँ रक्त संचार में वृद्धि का माध्यम रही हैं। प्राचीन काल में पुरुष जंगलों और खेतों में काम करते थे। हालांकि महिलाएं घरेलू काम करती थीं, लेकिन वह इतना कठिन श्रम नहीं था। मांसपेशियों के कम काम और कम शारीरिक गतिविधि के कारण, इससे उनका रक्तचाप बढ़ सकता था। वहीं, जब महिलाएं चूड़ियां पहनती हैं, तो उनकी कलाइयों पर चूड़ियों की निरंतर हलचल और घर्षण से रक्त संचार बेहतर होता है। इससे महिलाओं में उच्च रक्तचाप, चिड़चिड़ापन और तनाव कम होता है। चूड़ियां गोल आकार की होती हैं। शरीर से निकलने वाली ऊर्जा इन्हीं में घूमकर वापस शरीर में आ जाती है। इससे शरीर की जीवनी शक्ति बनी रहती है, महिलाओ की ऊर्जा का संरक्षण होता है। कांच की चूड़ियों की खनक सकारात्मक कंपन पैदा करती है, जो वातावरण को शुद्ध करने और महिला को नकारात्मक ऊर्जा से बचाने में मदद करती है। मानसिक संतुलन के अनुसार, कांच की चूड़ियां पहनने वाली महिलाएं भावनात्मक रूप से अधिक संतुलित पाई गईं, जबकि प्लास्टिक या सिंथेटिक चूड़ियां पहनने वालों में चिड़चिड़ापन और बेचौनी देखी गई।

माँग टीका का महत्व

भारतीय संस्कृति और परंपरा में इसे सोलह श्रृंगार का एक अत्यंत महत्वपूर्ण हिस्सा माना जाता है। माँग टीका माथे के ठीक बीच में लगता है, उसे आज्ञा–चक्र यानी तीसरा नेत्र कहा जाता है।

यह ज्ञान–केंद्र, एकाग्रता, और चेतना का प्रतीक माना जाता है। माँग टीका इस केंद्र को सक्रिय करता है। इसके अलावा माँग टीका का धार्मिक महत्व भी है। हिंदू धर्म में माँग टीका शादी शुदा महिला के सुहाग का प्रतीक है। माँग टीका पहनने के पीछे कई वैज्ञानिक कारण भी बताए जाते हैं माँग में टीका पहनने से सिर दर्द, तनाव और कई तरह की मानसिक समस्याएं दूर हो जाती है शरीर का टेंपरेचर भी कंट्रोल रहता है। यह शरीर में ऊर्जा को संतुलित करता है, जिससे महिलाओं को मानसिक तनाव और समस्याओं से दूर रहने में मदद मिलती है। माँग टीका शरीर के तापमान को नियंत्रित रखने में सहायक माना जाता है। इसे पहनने से इच्छाशक्ति, एकाग्रता और ज्ञान में वृद्धि होती है, जिससे सही निर्णय लेने में मदद मिलती है। यह महिलाओं के यश और सौभाग्य का प्रतीक माना जाता है और भावनाओं को नियंत्रित करने में मदद करता है।

पायल का महत्व

पायल पहनना न केवल भारतीय संस्कृति में सोलह श्रृंगार का हिस्सा है, बल्कि इसके कई स्वास्थ्य संबंधी और वैज्ञानिक फायदे भी हैं। चांदी की पायल विशेष रूप से रक्त संचार सुधारने, पैरों की सूजन कम करने और दर्द निवारक के रूप में कार्य करती है। इसकी मधुर ध्वनि घर में सकारात्मक ऊर्जा लाती है और प्रतिरक्षा शक्ति बढ़ाने में सहायक मानी जाती हैं।

चांदी की तासीर ठंडी होती है और इसके ऐंटी–इन्फ्लेमेटरी (सूजन–रोधी) गुण जोड़ों के दर्द और वात से जुड़ी समस्याओं में आराम पहुंचाते हैं। आयुर्वेद में 'वात' (Vata) शरीर की मुख्य ऊर्जा है जो 'वायु' और

'आकाश' तत्वों से मिलकर बनती है। यह शरीर की सभी गतिक्रियाओं जैसे सांस लेना, चलना, पाचन और नर्वस सिस्टम (तंत्रिका तंत्र) को नियंत्रित करती है। चांदी की पायल पैरों से घर्षण के कारण हड्डियां मजबूत करती है और पीठ, एड़ी व घुटनों के दर्द से राहत दिलाने में सहायक है। पायल पैरों के ऐक्यूप्रेशर बिंदुओं को दबाती है, जिससे ब्लड सर्कुलेशन बेहतर होता है और पैरों की सूजन कम होती है। रक्त संचार ठीक रहता है। यह शरीर की ऊर्जा को व्यर्थ होने से रोकती है और पैरों के माध्यम से ऊर्जा को शरीर में वापस लौटाती है। पायल की खनक घर के वातावरण से नकारात्मक ऊर्जा को दूर करती है और मन को प्रसन्न रखती है। पायल के घुंघरू जब पैरों से रगड़ खाते हैं, तो शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है और लसीका ग्रंथियाँ सक्रिय होती हैं। पारंपरिक मान्यता के अनुसार, पायल पैरों और पेट के निचले हिस्से में वसा मोटापा बढ़ने की गति को कम करती है। पायल चांदी की ही पहननी चाहिए। चांदी का संबंध चंद्रमा से है, चांदी में रोगाणुरोधी गुण होते हैं, जो संक्रमण को कम करने में मदद करते हैं और सकारात्मकता बनाए रखने में मदद करते है। यह महिलाओं के शरीर में हार्मोनल संतुलन बनाए रखने में भी मदद करती है।

बिछिया का महत्व

बिछिया पहनने के भी अपने अलग ही फायदे हैं जिनके बारे में भी थोड़ा जानते हैं। यह पैर की दूसरी उंगली में पहना जाता है। पैर की दूसरी उंगली की नस का सीधा संबंध गर्भाशय (Uterus) से होता है और यह नस हृदय तक जाती है जिससे ब्लड प्रेशर सही रहता है। बिछिया का दबाव गर्भाशय को स्वस्थ रखता है और मासिक धर्म चक्र को नियमित करने में मदद करता है।

- चांदी की बिछिया पहनने से मन को शांति व शरीर को शीतलता प्राप्त होती है और यह महिलाओं के हार्मोन को बैलेंस करने का काम करती है। मान्यता के अनुसार, चांदी की बिछिया पैरों के माध्यम से नकारात्मक ऊर्जा को दूर रखने का प्रतीक है और सकारात्मक ऊर्जा का संचार करती है, जिससे तनाव कम होता है। यह ऐक्यूप्रेशर के रूप में कार्य करती है, जिससे तलवे से लेकर नाभि तक की सभी नाड़ियाँ और पेशियां व्यवस्थित होती हैं। इससे अनियमित मासिक धर्म की समस्या दूर होती है और हार्मोन संतुलित रहते हैं। कुछ विशेष ध्यान देने योग्य बातें भी हैं।
- बिछिया हमेशा चांदी की ही पहनी जानी चाहिए, सोने की नहीं।
- यह हमेशा दोनों पैरों की दूसरी उंगली में पहनी जाती है।
- हिंदू मान्यता के अनुसार, कमर के नीचे सोना धारण करना वर्जित है।
- मछली के आकार वाली बिछिया को सबसे अधिक शुभ और स्वास्थ्य के लिए असरदार माना जाता है।

माथे पर बिंदी का महत्व

बिंदी को माथे की दोनों भौंह के बीच में लगाया जाता है यह शरीर का छठा चक्र होता है, जिसे कि आज्ञा–चक्र, भौंह–चक्र या तीसरा नेत्र भी कहते है। इन चक्रों का

वर्णन वेदों में भी मिलता है। यह जगह ज्ञान और अंतर्ज्ञान का केंद्र मानी जाती है। बिंदी लगाने का एक वैज्ञानिक कारण यह भी है कि यह स्थान शरीर की ऊर्जा का केंद्र होता है। बिंदी लगाने से ध्यान केंद्रित करने में मदद मिलती है और मन शांत रहता है। जब इस स्थान यानी इन चक्र पर बिंदी लगाई जाती है तो इससे आंतरिक ज्ञान को बढ़ाने वाली शाक्तियों का विकास होता है। यह ऐक्यूप्रेशर पॉइंट की तरह काम करता है। बिंदी लगाने से उस क्षेत्र की नसों पर हल्का दबाव पड़ता है, जिससे सिरदर्द (माइग्रेन) और तनाव में कमी आ सकती है। इस स्थान पर दबाव पड़ने से आँखों की नसों को आराम मिलता है और आंखों की रोशनी बेहतर होने में मदद मिल सकती है योग के अनुसार, महिलाएं जिस जगह पर बिंदी लगाती हैं उसे अजना चक्र कहा जाता है। अजना चक्र मनुष्य के शरीर का छठा और सबसे ताकतवर चक्र माना जाता है। और इस पॉइंट को दिन में कई बार दबाने से सेहत और स्किन को कई फायदे मिलते हैं। जब हम बिंदी लगाते हैं, तो कई बार उसे ऐडजस्ट करने में यह पॉइंट दबता भी है। योग के अनुसार, इस प्वाइंट को अजना चक्र कहते हैं, जो शरीर का सबसे ताकतवर और छठा चक्र है। इसमें सिर, आँखें, मस्तिष्क, पीनियल ग्रंथि और पिट्यूटरी ग्रंथि शामिल हैं। जब तीसरी आँख को दिन में कई बार दबाया जाता है तो इससे सेहत को कई फायदे मिलते हैं। यह न सिर्फ महिलाओं के लिए फायदेमंद साबित होती है, बल्कि पुरुषों के लिए भी। वैसे पुरुष बिंदी नहीं लगाते लेकिन वे रोज अजना चक्र पर कुमकुम का तिलक लगा सकते हैं। इसके अलावा पुरुष केवल माथे के इस प्वाइंट को रोजाना 100 बार प्रेस भी कर सकते हैं। बिंदी लगाने के कई फायदे हैं। सिर दर्द दूर हो सकता है, साइनस में आराम मिल सकता है, आंखों की रोशनी और सेहत में सुधार आता है, आपकी त्वचा जवां रहती है, अवसाद से बचते हैं, सुनने की शक्ति बेहतर होती है, याददाश्त बेहतर होती है और ध्यान में भी सुधार आता है, सतर्कता बेहतर होती है, तनाव की वजह से माइग्रेन का जोखिम कम होता है

वैज्ञानिक और आयुर्वेदिक कारण की बात करें तो आयुर्वेद के अनुसार, माथे के बीच में चंदन या कुमकुम लगाने से माथे को ठंडक मिलती है। बिंदी लगाने से माथे की मांसपेशियों में खून का बहाव बढ़ता है और चेहरे पर झुर्रियां देरी से आती हैं।

कान में बाली का महत्व

कान में बाली पहने से महिलाओं की सुंदरता में वृद्धि होती है। कान में बाली या कुंडल पहनना केवल फैशन नहीं, बल्कि ज्योतिषीय, वैज्ञानिक और स्वास्थ लाभों का एक अनूठा संगम है। यह कान के

ऐक्यूप्रेशर बिंदुओं को उत्तेजित करता है, जिससे मानसिक शांति, एकाग्रता में वृद्धि, बेहतर रक्त परिसंचरण और तनाव में कमी जैसे फायदे होते हैं। साथ ही, यह व्यक्तित्व को निखारता है और आत्मविश्वास बढ़ाता है।

स्वास्थ्य संबंध फायदे ऐक्यूप्रेशर पॉइंट का रिटमुलेशनः कान की लोब (lobe) का निचला हिस्सा ऐक्यूप्रेशर केंद्र होता है। यहाँ छेद करने से आँखों की रोशनी, सुनने की क्षमता, और मस्तिष्क के स्वास्थ्य में सुधार हो सकता हैं। बेहतर रक्त परिसंचरणः विशेषकर सोने की बाली पहनने से रक्त संचार (blood circulation) बेहतर होता है।

तनाव में कमीः यह माईग्रेन, सिरदर्द और चिंता (anxiety) को कम करने में मदद करता है।

हार्मोनल संतुलनः यह माना जाता है कि कान छिदवाने से ऊर्जा का संतुलन बना रहता है। किस धातु का बना है इसका भी महत्व होता है कान के लिए सोने की बाली पहनना ऊर्जा के संतुलन के लिए सबसे अच्छा माना जाता है। चांदी की बाली कान में होने वाले संक्रमण को कम करने में मदद कर सकती है और स्वच्छता को बढ़ावा देती है।

माँग में सिंदूर लगाने के मुख्य कारण

यह सुहाग की सबसे पवित्र निशानी है। सिंदूर यह दर्शाता है कि महिला विवाहित है और उसका पति जीवित है, जो उनके अखंड सौभाग्य को सूचित करता है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से देखें तो सिंदूर हल्दी, चूने और पारा के मिश्रण से बनता है, यह दिमाग को शांत रखता है, जो तनाव को कम करने और ब्लड प्रेशर को नियंत्रित करने में सहायक होता है। इसे माथे के उस हिस्से पर लगाया जाता है जो पिट्यूटॅरी ग्रंथि के पास होता है, जिससे एकाग्रता बढ़ती है। लाल रंग को ऊर्जा और शक्ति का प्रतीक माना जाता है, जो नारी के अंदर सकारात्मक ऊर्जा का संचार करता है।

कमरबंद पहनने का महत्व

महिलाएं अक्सर शादी में या मुख्य रूप से अपनी खूबसूरती बढ़ाने, सांस्कृतिक परंपरा का पालन करने और स्वास्थ्य लाभों के लिए इसे पहनती हैं। यह आभूषण कमर को सुडौल दिखाने, वज़न नियंत्रित करने, पीठ के निचले हिस्से से दर्द को कम करने और पेट की मांसपेशियों को सहारा देने में मदद करता है। यह अक्सर पारंपरिक या शादियों के परिधानों के साथ पहना जाता है। महिलाओं की कमर पर पहने जाने वाली तगड़ी या कमरबंद न सिर्फ सुंदरता बढ़ाते हैं बल्कि महिलाओं को कई तरह के स्वास्थ्य लाथ भी प्रदान करते हैं। कमरबंद ज्यादातर चांदी से बना आभूषण होता है जो महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए फायदेमंद होता है। चांदी में ऐंटीऑक्सीडेंट तत्व पाए जाते हैं। यह स्किन इंन्फेक्शन को भी दूर करती है। जहां तगड़ी पहनी जाती है वहां पेट पर कई नसे होती हैं। इससे पेट से जुड़ी समस्याएं दूर हो जाती हैं। ऐसे में तगड़ी वहाँ दवाब डालकर ऐक्यूपंक्चर का काम करती है। चांदी की तगड़ी या कमरबंद से पेट का फैट कंट्रोल में रहता है और यह वज़न घटाने में सहायक माना जाता है। यह पीठ के निचले हिस्से और कमर से दर्द को कम करने मे मदद करता है। मान्यता है कि यह पेट की मांसपेशियों को सहारा देता है और पाचन में सुधार कर सकता है।

बाजूबंद पहनने का महत्व

सकारात्मक ऊर्जाः ऐसा माना जाता है कि यह शरीर को बुरी नज़र या नकारात्मक ऊर्जा से बचाता है, और यह भी मान्यता है कि यह नकारात्मक ऊर्जा से रक्षा करता है और शरीर में सकारात्कम ऊर्जा बनाए रखता है। यह आध्यात्मिक शक्ति और शरीर में ऊर्जा संतुलन के प्रतीक के रूप में पहना जाता है। यह माना जाता है कि बाजूबंद पहनने से नकारात्मक ऊर्जा दूर रहती है और यह सकारात्मक ऊर्जा को आकर्षित करता है। आयुर्वेद में ऊपरी बांह को जीवन शक्ति का स्थान माना जाता है,

इसलिए इसे शक्ति और ऊर्जा के संतुलन के रूप में पहना जाता है।

पहले के समय में, यह आभूषण सोने, चांदी या कीमती पत्थरों से बना होता था और इसे विशेष रूप से सुहागिन महिलाओं के लिए अनिवार्य माना जाता था। यह उनके आर्थिक संकट में भी सहयोग दे सकते हैं।

अंगूठी पहनने का महत्व

शादी या सगाई में अनामिका में अंगूठी पहनना प्यार, वफादारी और दो लोगों के बीच अटूट रिश्ते का प्रतीक है। एक पुरानी मान्यता के अनुसार, इस उंगली की नस सीधे दिल से जुड़ी होती है। चांदी की अंगूठी मन को शांत करती है, गुस्सा कम करती है। अनामिका उंगलीः इसमें अंगूठी पहनने से मानसिक शांति और रिश्तों में मिठास आती है। छोटी उंगलीः (कनिष्ठा) यह बुद्धि और अंतर्ज्ञान का प्रतीक है। अंगूठाः यह इच्छा शक्ति और व्यक्तिगत ताकत को दर्शाता है। चांदी की अंगूठी मानसिक शांति, एकाग्रता और आत्मनियंत्रण बढ़ाती है, जबकि सही उंगली में इसे पहनने से आत्मविश्वास पैदा होता है। जैसे अंगूठा या कनिष्ठा में अँगूठी धारण करने से कॅरियर में वृद्धि होती है और तनाव कम होता है। अंगूठे में चांदी पहनने से पाचन तंत्र सुधरता है और हड्डियों को मज़बूती मिल सकती है। यह शरीर में ठंडक बनाए रखती है। आत्मविश्वासः यह निर्णय लेने की क्षमता को बेहतर बनाती है और ध्यानसाधना में एकाग्रता बढ़ाती है।

नाक की नथ पहनने का महत्व

नाक की नथ की बात करें तो भारतीय संस्कृति में नाक की नथ का गहरा सांस्कृतिक, धार्मिक और आयुर्वेदिक महत्व है। यह मुख्य रूप से विवाहित महिलाओं के सोलह श्रृंगार का हिस्सा है, जो सौभाग्य, समृद्धि और पवित्रता का प्रतीक है। आमतौर पर बाईं ओर छिदवाई गई नाक, प्रजनन, स्वास्थ्य और प्रसव को आसान बनाने से जुड़ी मानी जाती है। नथ पहनना सुहाग की निशानी है। कई पारंपरिक शादियों में दुल्हन के लिए नथ पहनना अनिवार्य माना जाता है। आयुर्वेदिक स्वास्थ्य के अनुसार, नाक के बाएं हिस्से में छेद करने से प्रजनन अंगों से जुड़ी नसों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। माना जाता है कि इससे मासिक धर्म के दौरान होने वाला दर्द कम होता है। नथ किस धातु की बनी हुई है इसका भी महत्व है। आमतौर पर नथ सोने या चांदी की बनी होती है, क्योंकि माना जाता है कि ये धातुएं शरीर की गर्मी को कम करती हैं और ऊर्जा को संतुलित करती हैं।

अंततः नारी के आभूषणों के महत्व पर लिखे अपने आलेख को मैं निम्न पंक्तियों से पूर्ण करती हूँ:

नथ, कंगन, बिछिया, माँग टीका केवल श्रृंगार की नहीं है पहचान।

इनमें बसता आरोग्य, संतुलन और जीवन का वरदान।

सम्पर्क सूत्रः कविता मिश्रा, हिंदी टंकक, एन.एस.डी.
E-mail: nsdkavita@gmail.com

ठुमरी सम्राट की कलात्मक विरासत

डॉ. सत्यप्रिय पाण्डेय

नवाब वाजिद अली शाह मूलतः साहित्य और कला–प्रेमी व्यक्ति थे, किन्तु गद्दी तो उन्हें दैव संयोगवश संभालनी पड़ी थी और उसमें उनका मन रमता नहीं था। उनका मन तो राग–रंग और 'रहस' में डूबा हुआ था वे खुद कन्हैया बनकर रहस करते थे। कई–कई रहस उन्होंने बनाए, खेले और एक नए ढब का नाट्य विकसित किया। बहुत से लोग वाजिद अली शाह को हिन्दुस्तानी नाटक का प्रथम नाटककार मानते हैं, क्योंकि रहस–मंज़िल में मंचस्थ उनका 'राधा कन्हैया का किस्सा' अपने किस्म का पहला नाटक था। कहते हैं कि अँग्रेजों ने नवाब के लिए हकीमों से ऐसी दवा बनवाई थी जिसे पीकर नवाब दिन रात नाच गाने, ऐश–ओ–आराम में ही गर्क रहते थे। उन्हें किसी चीज़ की सुध बुध नहीं रहती थी। अमृतलाल नागर जी अपनी पुस्तक साहित्य और संस्कृति में लिखते हैं कि–शेर और शायरी करना, नाचना–गाना तो उन्हें शुरू से ही बहुत पसंद था, अब सब छोड़कर फिर से ऐश की सतरंगी धार में मदमस्त होकर बहने लगे। महलों में 'इंदर सभा', 'जोगिया मेले' और 'रहस' (रास) होने लगे। ठुमरी का चलन फैलाया, नये–नये नामों के नृत्य बनाये। शहर की हर नामी और हसीन नाचने या गानेवाली उनके महलों में किसी न किसी तरह जुड़ गयी।" नवाब वाजिद अली के शासन काल में बड़े–बड़े हुनरमंद, कलावंत, संगीतकार लखनऊ में जमा हो रहे थे। कह सकते हैं कि लखनऊ उस समय संगीत और कला का केंद्र बन गया था। कहीं जिक्र आया है कि लोगों ने ग़ालिब से कहा था कि आप लखनऊ क्यों नहीं जा रहे हैं, तो उन्होंने जवाब दिया था कि–

जहां जमुना नहीं, जामा मस्जिद नहीं,
उस शहर में ग़ालिब को जाना नहीं।।

नवाब वाजिद अली शाह को ठुमरी का जनक माना जाता है। उन्होंने बहुत सी ठुमरियों की रचना की है जिसमें उन्होंने अलग–अलग लय और तालों का प्रयोग किया है। नवाब को ठुमरियों का आविष्कारक माना जाता है। उन्होंने 'पिया जाने आलम' नाम से बहुत–सी ठुमरियाँ और अख़्तर नाम से बेशुमार ग़ज़लें लिखी हैं। उनकी रची ठुमरियाँ ताल और लय की दृष्टि से आज भी बेजोड़ हैं। इसी परम्परा में बाद में नासिर पिया और सनद पिया ने लिखना शुरू किया। पद्य में बादशाह अख़्तर नाम से ग़ज़ल और जाने आलम पिया या अख़्तर पिया नाम से ठुमरी लिखते थे। उनकी एक ठुमरी देखें–

सैयाँ जाओ मैं नहीं बोलूँ तोसे,

अख़्तर पिया सों, यो जा कहियो,
लंगर तोरा चतुर सुजान।

मैं अपना दधि बेचन निकली सास ननद की चोरी,

सुलतान आलम घर जाने न दूँगी,
मोतियन की लर तोरी।।

राधा और कृष्ण के प्रेम और वियोग को लेकर ही ज़्यादातर ठुमरियों की रचना की गयी है। यह समय ठुमरी, दादरा, पूर्वी आदि के उत्कर्ष का काल था। लोक संगीत और लोकनाट्य के विकास में नवाब वाजिद अली शाह का योगदान अविस्मरणीय और ऐतिहासिक है। वे एक कुशल एवं सफल शासक भले न रहे हों (हालांकि यह तर्क अँग्रेज़ अधिकारियों का था कि अवध का नवाब नचैयों और गवैयों से घिरा रहता है, उसे राज काज की फुर्सत ही कहाँ) किन्तु वे सच्चे अर्थों में साहित्य, संगीत

और कला प्रेमी थे। उनकी ठुमरियों में उनका सरस हृदय सहज ही परिलक्षित होता है। वे रहस खेलते थे और यह रहस रास की ही एक नई विधा कही जा सकती है। ये ठुमरियाँ रहस की मार्मिकता को बखूबी उजागर करने में सक्षम हैं। कृष्ण का नटखट रूप, गोपियों की मनुहार, कृष्ण का गोपियों को रिझाना, ये सब इन ठुमरियों में अभिव्यक्त हुआ है–ठुमरी की एक बानगी देखें –

निर्दय शाम ने छूय लिई। पनघट पै ठाढ़ी गूजरिया।
पग धरत–धरत लट पलट गयो।

कूए पर गागर उलट गयो।
कर पकरत कंगन उछट गयो,
चल झार दे अख़्तर बांकरिया।।

ठुमरी दरअसल सुरीली राग में गायी जाने वाली विधा है। ठुमरी के लिए सुरीली एवं मधुर आवाज़ का होना आवश्यक है। आवेग, आवेश–सहित ज़ोरदार, रूखी एवं कर्कश आवाज़ ठुमरी गायकी के लिए पूर्णतः अनुपयुक्त होती है। किन्तु नवाब अपनी भारी–भरकम आवाज़ में ठुमरी गाते थे जो बहुत कर्ण–प्रिय तो नहीं रही होगी किन्तु उसमें अर्थ–गाम्भीर्य बहुत है ,वह बड़ी व्यंजक और मारक है–एक बानगी और देखें–

अइलो मैं तोरे मंडरवा,
रहँस रहँस गले लागूं पहरवा,

इतनी अर्ज मोरी मानो जी अख़्तर,
सास–ननद की मैं चोरी पहरवा।।

वियोग और विरह की पीड़ा को अभिव्यक्त करती उनकी एक अन्य ठुमरी देखें–

मन फेर लिया करके बतियाँ।
अब काहे न लगावत रे छतियाँ।

गई तेरे फिराक में नींद अड़ियाँ,
कहो कैसे कटें तुन बिन रतियाँ।।

इसी भाव से मिलता जुलता रीतिकाल का एक छंद याद आ रहा है–

अब यों उर आवत है सजनी,
मिलि जाऊँ गले लगि की छतियाँ।।

पंक्ति के अंत में पदों की पुनरावृत्ति चमत्कार को जन्म देती है मसलन टपक–टपक, तपक–तपक और चमक–चमक जैसे शब्दों का प्रयोग न केवल नाद सौन्दर्य उत्पन करता है बल्कि पाठक और श्रोता को चमत्कृत भी करता है। इन ठुमरी गीतों में गोपियों की विरह व्यथा के बहाने स्त्री पुरुष की विरह वेदना का इतना मार्मिक वर्णन हुआ है कि सूरदास के पदों की स्मृति ताज़ा हो उठती है, मसलन यह ठुमरी देखें –

जिया बहि गयो नैनन टपक–टपक।
घाव रहि गयो मन में तपक–तपक।

घिर आए बदरा चमक–चमक।
जैसे दामिनि दमकत दमक–दमक।

खुली रह गई साँझ सों पलक–पलक।
अख़्तर रतियाँ कटीं बिलख–बिलख।।

अख़्तर की ठुमरियों में केवल प्रेम और विरह की तड़प ही नहीं है बल्कि लोक जनजीवन की नोक–झोंक, हर्ष–विषाद, राग–द्वेष भी अभिव्यक्त हुआ है, एक उदाहरण देखें –

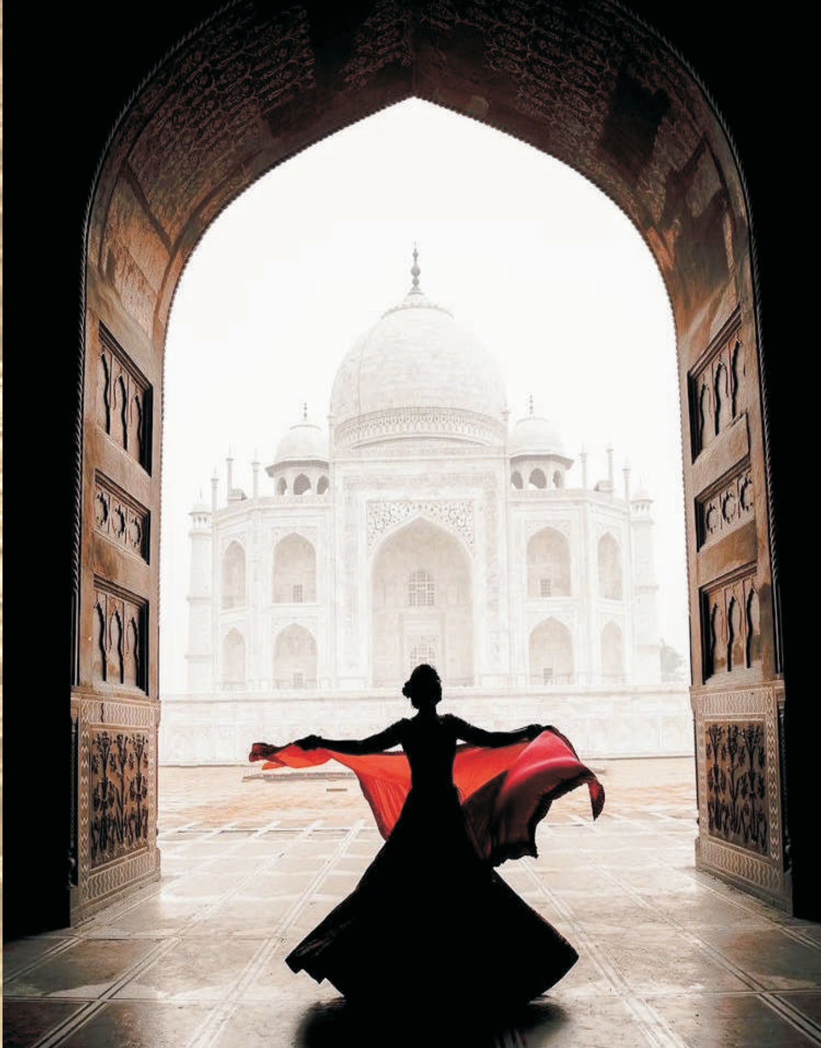

इसका एक अन्य पाठ भी देखें –

ना मानूं, ना मानूं, ना मानूं रे,
दगादार तोर बतिया ना मानूं रे।
राति कहे पिया झुलनी गढ़ाइ देब,
होत भेनसार बिसरि गए बतिया, ना मानूं ....।।

जहाँ एक तरफ विवाहिता को आभूषण न मिलने की शिकायत है तो वहीं दूसरी तरफ सौतन को अतिरिक्त आदर और प्रेम दिए जाने का उलाहना भी मौजूद है, एक ठुमरी देखें–

सैयाँ ले आये दो जनियाँ।
ओढरी ओढ़े शाल दोशाला, ब्याहता सोये पाँतरिया।।

इन ठुमरियों में संसार का राग–रंग तो है ही, साथ ही संसार की असारता और क्षण भंगुरता भी अभिव्यक्त हुई है। भोग में आकंठ डूबे नवाब को कभी यह ख़याल भी आया होगा कि–

ये जोबना दिन चार रे मेरो।
इस जोबन पर मान न कीजिये,

जोबना रहे दिन चार रे मेरो।
यह जोबन तरवर की छैयां,

मन में सोच विचार रे मेरो।।

सूरदास ने भी यही गाया था कि–

जा दिन मन पंछी उड़ि जइहैं,
ता दिन तेरे तन तरुवर के
सबै पात झरि जइहैं।

या देही को गरब न कीजै स्यार, काग, गिध खइहैं,
तनिन मैं तन कृमि कै विष्टा कै, ह्वै खाक उडैहैं।।

नवाब वाजिद अली शाह ने न केवल ठुमरी को जन्म दिया बल्कि उसका विकास भी किया। उन्होंने उसकी कई शैलियों, रागों पर आधारित ठुमरियों की रचना की है मसलन ठुमरी रागिनी भैरवी, ठुमरी ऐजन, ठुमरी ऐजन मिन आलम, ठुमरी दर झिंझोटी, ठुमरी दर सारंग ठेका, ठुमरी खमाज ताल कव्वाली, ठुमरी राग पीलू, ठुमरी रहस मुसन्निफ ठुमरी, अज मुसन्निफ जैसे ठुमरी के कई–कई प्रकारों की चर्चा की है न केवल चर्चा बल्कि इन रागों पर आधारित ठुमरियां बनायी हैं। ठुमरियों के बारे में एक बात और जो बड़ी महत्वपूर्ण है वह यह है कि इनमें हिन्दू देवताओं, नायक–नायिकाओं की चर्चा आई है तब

बिंदिया मोरी कंधैया लीनौ छीन।
यह बिन्दिया मोरे मैके से आई, सास कहे क्या कीन।।

संयुक्त परिवार की मर्यादा और बंधन को व्यक्त करती एक ठुमरी देखें–

अरे सैयां सेज चलो अँखियाँ अलसानी।
हौले से पांव धरो पलंगा पर, जागत हमरी जेठानी।।

संयुक्त परिवार में कई तरह के विधि–निषेध होते थे, पति अपनी पत्नी के पास चोरी से जाता था और वह भी तब जब परिवार के अन्य लोग सो जाते थे। इसी विवशता का वर्णन उक्त ठुमरी में हुआ है। पति पत्नी के मनुहार, उनकी टकराहट, पति की वादा खिलाफी के वर्णन भी ठुमरियों में आये हैं–

ना बोलो यार ना मानो मोरी बतियाँ।
रात कहे सैयाँ झुलनी गढ़ा देउं,
भये भिनसारे बिसर गईं बतियाँ।।

जबकि नवाब मुसलमान थे। जाहिर है यह अवाम के प्रति सद्भाव का प्रदर्शन भी कहा जा सकता है अथवा उनके हृदय में सर्व धर्म समभाव का भाव मौजूद था। एक ठुमरी देखें जिसमें वाजिद अली शाह की प्रशंसा की गई है, जिसमें उनकी तुलना इन्द्र और विक्रमादित्य आदि से की गई है और यह ठुमरी अख़्तर ने ही लिखी है।

तुम सन कोऊ नहिं देत देखाई
सुन्दर आप सभा सब सुन्दर
सब जग को सुखदाई।
जैसे इंद्र परियन में बैठे

सखियन संग कन्हाई
तारन में जैसे चन्द्र दुइज को
दिन–दिन होत सवाई
मानौ बीर बिक्रमा के सम
और करन की न्याई
दयावंत दानी अत जोधा
जग प्रचंग प्रभुताई
गज–गज तुरंग उर माल दोसाला
गिनती कौन गिनाई
मोहे दीजे बेर, अबेर मत कीजे
तन दीजे ढिठलाई
नगर–नगर बन पवन बहेलके
बिलालाप अतलाई
सुलतान आलम सों कहत निजामी
छाँड़ि चरन कहाँ जाई
मोहे छाँड़ि सरन कहाँ जाय
कोई दीजे ठाँव बताई
तुम सखि इंद्र सभा सब तारो
तारत बाज न लाई
देखि दरस भयो मगन निजामी।।

वैसे यह अतिशयोक्ति नहीं है कि सुलतान जनता के बीच अत्यंत लोकप्रिय थे, वे प्रजा के चहेते थे क्योंकि जब वे तख़्त से उतारे गए थे और कलकत्ता को रवाना हो रहे थे तो लखनऊ शहर रो रहा था और अख़्तर ने बड़े भारी मन से जो ठुमरी गाई थी वह यही थी कि–

बाबुल मोरा नैहर छूट्यो ही जाय ......।

और भी गाया था कि –

दरो–दीवार पर हसरत से नज़र करते हैं,
खुश रहो अहले वतन हम तो सफ़र करते हैं।।

सम्पर्क सूत्र : ओम प्रकाश सागर, पूर्व उप कुलसचिव, एन.एस.डी
E-mail: opsagar@gmail.com

सम्पर्क सूत्रः डॉ. सत्यप्रिय पाण्डेय,
लोक साहित्य विमर्शकार एवं एसोसिएट प्रोफेसर,
दिल्ली विश्वविद्यालय
E-mail: pandeysatyapriya@gmail.com

मिट्टी की खुशबू से संस्कारों तक

सुश्री चेतना वशिष्ठ

भारत–एक ऐसा देश जिसकी पहचान केवल पर्वतों, नदियों और ऐतिहासिक स्मारकों से ही नहीं, बल्कि उसके लोगों की भावनाओं, संस्कारों और मिट्टी की खुशबू से होती है। यह देश अपने नागरिकों के लिए केवल भौगोलिक इकाई नहीं, बल्कि आत्मा का वह हिस्सा है जो जन्म से लेकर मृत्यु तक जीवन के हर क्षण में साथ चलता है। चाहे कोई भारतीय देश में रहे या हज़ारों किलोमीटर दूर विदेश में, उसका मन हमेशा इस भूमि की ओर लौटता है। सवाल यह है–ऐसा क्यों है? क्यों भारत हर भारतीय के हृदय में इतनी गहराई से बसा है?

इस प्रश्न का उत्तर भारत की उन अदृश्य भावनाओं, परंपराओं और सांस्कृतिक संबंधों में मिलता है जो किसी पुस्तक, कानून या मानचित्र से नहीं, बल्कि अनुभवों से जन्म लेते हैं। इस लेख में हम जानेंगे कि मिट्टी की खुशबू से लेकर भारतीय संस्कारों तक, ऐसे कौन–से तत्व हैं जो हर भारतीय के मन में भारत को एकता की भावना के रूप में स्थापित करते हैं।

भारत की मिट्टी की खुशबू भारतीयों के लिए सिर्फ गंध नहीं, बल्कि भावनाओं का संसार है। जब पहली बारिश धरती को छूती है तो जो सुगंध उठती है, वह केवल मौसम का संकेत नहीं देती, बल्कि बचपन की यादें, गाँव के रास्ते, खेतों का सौंदर्य और अपनेपन की अनुभूति को जगाती है।

भारत की 70 प्रतिशत से अधिक आबादी वर्षों तक गाँवों से जुड़ी रही है। इसलिए मिट्टी की महक भारतीयों के जीवन का अभिन्न हिस्सा बन गई है। बचपन में नंगे पाँव धूल में दौड़ना, पेड़ों के नीचे खेलना, खेतों में काम करते माता–पिता को देखना–ये अनुभव मन में कभी मिटते नहीं।

विदेश में रहने वाले भारतीयों के लिए "मिट्टी की खुशबू" उनकी जड़ों का प्रतीक है। यह खुशबू बताती है कि चाहे वे कितनी भी दूर चले जाएँ, उनकी पहचान इस भूमि से ही जुड़ी हुई है। उनकी इस भावना को इस गाने में बखूबी व्यक्त किया गया है–

इस गांव की अनपढ़ मिट्टी पढ़ नहीं सकती तेरी चिट्ठी
ये मिट्टी तू आकर चूमे तो इस धरती का दिल झूमे

घर आजा परदेसी ...

इसलिए भारत केवल भूमि नहीं–स्मृतियों की धरोहर है। भारतीय संस्कार–दिल को जोड़ने वाली अदृश्य शक्ति है। भारतीय समाज की सबसे बड़ी ताकत उसके संस्कार हैं। ये संस्कार ही हर भारतीय को अपने देश, समाज और परिवार से भावात्मक रूप से जोड़ते हैं।

भारत में परिवार केवल माता–पिता और बच्चों तक सीमित नहीं होता। यह दादा–दादी, चाचा–चाची, भाई–बहन, सभी रिश्तों का विस्तार है। संयुक्त परिवार की परंपरा ने भारतीयों में साथ रहने, साझा करने और एक–दूसरे का सहारा बनने की अद्‌भुत क्षमता विकसित की है। यही कारण है कि भारतीय जहाँ भी रहते हैं, परिवार को प्राथमिकता देते हैं।

भारतीय संस्कृति में "नमस्ते" केवल अभिवादन नहीं, एक मूल्य है। बड़ों के चरण स्पर्श करना, छोटे बच्चों को दुलारना– ये परंपराएँ मन में विनम्रता और प्रेम का बीज बोती हैं। ये संस्कार भारतीयों को दुनिया में अलग पहचान देते हैं। भारतीय जीवन दर्शन कर्म को सर्वोपरि मानता है। "कर्म करो और फल की चिंता मत करो"–यह शिक्षा जीवन को संतुलित बनाती है। यह दर्शन हर भारतीय के मन में गहराई से बसता है और उसे आत्मिक शक्ति देता है।

भारत एक ऐसा देश है जहाँ हर मौसम, हर महीने और हर क्षेत्र का अपना अलग त्योहार है।

दीपावली की रोशनी, होली के रंग, ईद की मिठास, क्रिसमस की घंटियाँ–हर त्योहार एकता और प्रेम का संदेश देता है।

गरबा, बिहू, ओणम, पोंगल, वैशाखी–प्रत्येक राज्य की सांस्कृतिक पहचान उसके त्योहारों से झलकती है।इन उत्सवों में भारतीय जीवन का सौंदर्य, ऊर्जा और उत्साह दिखाई देता है।त्योहार बताते हैं कि–

भारत में खुशी केवल व्यक्तिगत नहीं, सामूहिक होती है।

भारत की भूमि विविध प्राकृतिक सौंदर्य से भरी हुई है। हिमालय की बर्फीली चोटियाँ, राजस्थान का सुनहरा रेगिस्तान, केरल की हरी–भरी नदियाँ, गोवा के समुद्र तट– सब अपने–अपने रूप में भारत को अनोखा बनाते हैं।

भारतीय संस्कृति में पेड़–पौधों, नदियों और पर्वतों को केवल प्राकृतिक संसाधन नहीं माना जाता, बल्कि माता, देवी या देवता के रूप में पूजा जाता है। यह दर्शाता है कि प्रकृति भारतीयों के मन में कितनी गहराई से बसती है।

भारत का हर क्षेत्र अपना अनोखा सौंदर्य प्रस्तुत करता है। इस सौंदर्य के कारण भारतीय चाहे जहाँ जाएँ, मन हमेशा अपने देश की ओर खिंचता रहता है।

भारत को विश्व "आध्यात्मिक गुरु" के रूप में जानता है। योग, ध्यान, वेद, उपनिषद, गीता– ये सभी आध्यात्मिक

धरोहरें भारत की पहचान हैं। योग आज पूरे विश्व में अपनाया जा रहा है। यह भारत की उन प्राचीन शिक्षाओं का प्रमाण है जो तन और मन को संतुलित करती हैं।

रामायण, महाभारत, गुरुग्रंथ साहिब, कुरान के संदेश—ये सब भारत की आध्यात्मिक समृद्धि को दर्शाते हैं।

यह विविधता भारतीय समाज में सहिष्णुता, करुणा और सद्भाव लाती है। भारत की आध्यात्मिकता मन को शांति देती है और यही शांति भारतीयों को अपने देश के प्रति भावनात्मक रूप से जोड़ती है।

भारत का इतिहास केवल युद्धों या साम्राज्यों का इतिहास नहीं, बल्कि ज्ञान, कला, विज्ञान और संस्कृति का इतिहास है। सिंधु घाटी सभ्यता, नालंदा विश्वविद्यालय, तक्षशिला— यहां का इतिहास भारत की बौद्धिक क्षमता को दर्शाता है।

स्वतंत्रता संग्राम ने भारतीयों को एकजुट किया। गांधी, भगत सिंह, रानी लक्ष्मीबाई, सुभाष चंद्र बोस—इन महापुरुषों का बलिदान भारतीयों को सदैव प्रेरित करता है। इतिहास की यही विरासत भारतीय मन में देश के प्रति गर्व भर देती है।

भारतीय भाषाएँ और लोकपरंपराएँ भी देश के प्रति इस गहरे जुड़ाव का एक महत्वपूर्ण कारण हैं। भारत में सैकड़ों भाषाएँ और हज़ारों बोलियाँ बोली जाती हैं, फिर भी हर भाषा में अपनापन और संस्कृति की मिठास झलकती है। हिंदी, तमिल, बंगाली, पंजाबी, मराठी, गुजराती या असमिया। हर भाषा अपने भीतर इतिहास, लोककथाएँ और पीढ़ियों की भावनाएँ समेटे हुए है।

लोकगीतों और लोकनृत्यों में भारत की आत्मा बसती है। गाँवों में गाए जाने वाले गीत, विवाहों की रस्में, पारंपरिक वेशभूषाएँ भारतीय जीवन की जीवंतता को दर्शाती हैं। यही कारण है कि विदेशों में बसे भारतीय भी अपनी मातृभाषा और लोकसंस्कृति को सहेजकर रखते हैं। जब वे अपनी भाषा सुनते हैं या अपने लोकगीतों की धुन पर झूमते हैं, तो उन्हें अपने देश की मिट्टी का स्पर्श महसूस होता है। भारतीय भाषाएँ केवल संवाद का माध्यम नहीं, बल्कि संस्कृति और भावनाओं का वह पुल हैं जो हर भारतीय को उसकी जड़ों से जोड़े रखते हैं।

भारतीय भोजन भी देश के प्रति भावनात्मक लगाव को मज़बूत करने वाला एक महत्वपूर्ण तत्व है। भारत के प्रत्येक राज्य का भोजन उसकी संस्कृति, जलवायु और जीवनशैली को दर्शाता है। पंजाब का सरसों का साग और मक्के की रोटी, दक्षिण भारत की इडली—दोसा, गुजरात का ढोकला, बंगाल की मिठाइयाँ

और राजस्थान की दाल–बाटी। हर व्यंजन में परंपरा और अपनत्व का स्वाद छिपा होता है। भारतीय भोजन केवल पेट भरने का साधन नहीं, बल्कि परिवार और समाज को जोड़ने का माध्यम भी है। त्योहारों और पारिवारिक अवसरों पर मिलकर भोजन करना भारतीय संस्कृति का अभिन्न हिस्सा है। विदेशों में रहने वाले भारतीय जब भारतीय व्यंजन बनाते या खाते हैं, तो उन्हें अपने घर, परिवार और बचपन की यादें ताज़ा हो जाती हैं। मसालों की खुशबू, घर के बने खाने का स्वाद और माँ के हाथों की रोटी– ये सभी भावनाएँ भारतीयों के मन में अपने देश के प्रति गहरा प्रेम जगाती हैं। इस प्रकार भारतीय भोजन भी भारत की सांस्कृतिक आत्मा का महत्वपूर्ण प्रतीक है।

भारत की कला, संगीत और साहित्य भी हर भारतीय के मन में देश के प्रति गर्व और प्रेम की भावना जगाते हैं। भरतनाट्यम, कथक, ओडिसी और कथकली जैसे शास्त्रीय नृत्य केवल मनोरंजन नहीं, बल्कि भारतीय परंपरा और आध्यात्मिकता की अभिव्यक्ति हैं। इसी प्रकार सितार, तबला, बांसुरी और शास्त्रीय राग भारतीय संगीत की समृद्ध विरासत को दर्शाते हैं।

कबीर, तुलसीदास, प्रेमचंद, रवीन्द्रनाथ टैगोर और महादेवी वर्मा जैसे साहित्यकारों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से भारतीय समाज, संस्कृति और मानवीय मूल्यों को अमर बना दिया। भारतीय कला और साहित्य में जीवन के हर रंग– प्रेम, त्याग, भक्ति, वीरता और करुणा–का अद्भुत चित्रण मिलता है। यही कारण है कि भारतीय चाहे दुनिया के किसी भी कोने में हों, भारतीय संगीत की धुन या किसी कविता की पंक्तियाँ सुनकर भावुक हो उठते हैं। कला और साहित्य भारतीयों को उनकी सांस्कृतिक जड़ों से जोड़ते हैं और उन्हें अपनी पहचान का बोध कराते हैं।

आज आधुनिकता और तकनीकी प्रगति के इस युग में भी हम भारतीयों का अपनी समृद्ध संस्कृति के प्रति प्रेम कम नहीं हुआ है, बल्कि और अधिक मज़बूत हुआ है। विज्ञान, अंतरिक्ष, सूचना प्रौद्योगिकी, खेल और शिक्षा जैसे क्षेत्रों में भारत की उपलब्धियाँ हर भारतीय के मन में गर्व की भावना उत्पन्न करती हैं। चंद्रयान और मंगलयान जैसे अभियानों ने यह सिद्ध किया है कि भारत केवल अपनी परंपराओं में ही नहीं, बल्कि आधुनिक विज्ञान और तकनीक में भी विश्व का मार्गदर्शन करने की क्षमता रखता है। विदेशों में बसे भारतीय जब भारत की सफलताओं को देखते हैं, तो उनका सिर गर्व से ऊँचा हो जाता है। साथ ही, भारतीय युवाओं में भी अपनी संस्कृति और विरासत के प्रति जागरूकता बढ़ रही है। वे आधुनिक जीवनशैली अपनाते हुए भी योग, भारतीय त्योहारों, पारंपरिक मूल्यों और परिवार की महत्ता को बनाए रखे हुए हैं। यही संतुलन भारत को विशिष्ट बनाता है। भारत केवल अतीत की महानता का प्रतीक नहीं, बल्कि भविष्य की असीम संभावनाओं का भी परिचायक है, और यही भावना हर भारतीय को अपने देश की मिट्टी से जोड़े रखती है।

सम्पर्क सूत्र : चेतना वशिष्ठ,
सहायक निदेशक (रा.भा) एन.एस.डी
E-mail: vashishtchetna@gmail.com

दिल्ली से मॉस्को तक : GITIS थिएटर फ़ेस्टिवल की हमारी यात्रा

श्री निलय दे

राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय (2024–2027) के द्वितीय वर्ष के विद्यार्थियों के रूप में मॉस्को, रूस में आयोजित GITIS थिएटर फ़ेस्टिवल में भाग लेने का अवसर हम सभी के लिए वास्तव में अविस्मरणीय अनुभव था। रंगमंच ने हमें हमेशा पुस्तकों और प्रस्तुतियों के माध्यम से विभिन्न संस्कृतियों से जोड़ा था, लेकिन इस यात्रा ने हमें उस जुड़ाव को वास्तविक जीवन में अनुभव करने का अवसर दिया।

हम दिल्ली से मॉस्को अपनी शास्त्रीय प्रस्तुति "कर्मांकुश" लेकर पहुँचे, जो अंतर्राष्ट्रीय मंच पर भारतीय रंगमंच और संस्कृति का प्रतिनिधित्व कर रही थी। रूसी दर्शकों के सामने प्रस्तुति देना हमारे लिए उत्साह और भावनाओं से भरा अनुभव था। यद्यपि भाषा और संस्कृति अलग थीं, फिर भी रंगमंच की संवेदनाओं ने सभागार में उपस्थित सभी लोगों को एक सूत्र में बाँध दिया। अपनी प्रस्तुति के माध्यम से हमने भारतीय शास्त्रीय कथा–वाचन, परंपराओं और अभिनय शैली की सुंदरता को साझा करने का प्रयास किया।

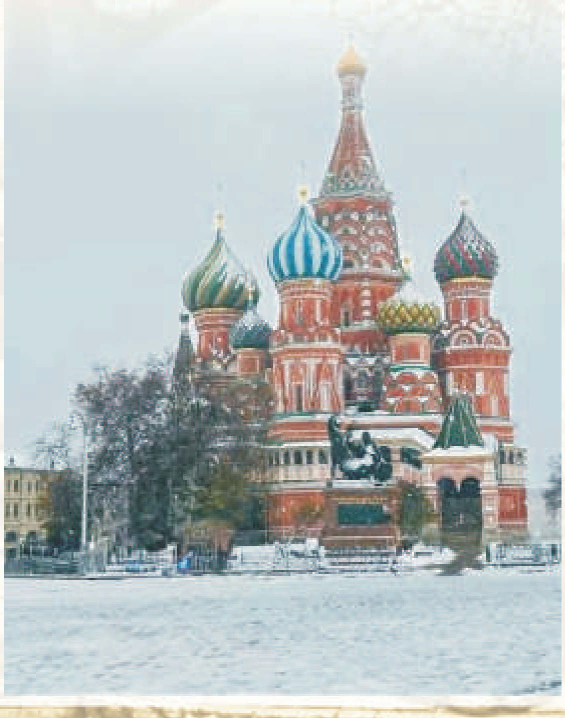

दर्शकों से मिली गर्मजोशी भरी प्रतिक्रिया ने हमें युवा रंगकर्मी और विद्यार्थियों के रूप में गर्व और गहरे उत्साह से भर दिया।

हमारी यह यात्रा अपने आप में एक रोमांचक अनुभव बन गई। एयरोफ्लोट एयरलाइंस में सीटों की कमी के कारण सात विद्यार्थियों और हमारे एक शिक्षक को अलग मार्ग से यात्रा करनी पड़ी। उन्होंने दिल्ली से अबू धाबी और फिर अबू धाबी से मॉस्को तक की कनेक्टिंग फ्लाइट द्वारा सफर किया।

अबू धाबी एयरपोर्ट पर ठहराव का अनुभव भी हमारी इस यात्रा की एक नई और यादगार स्मृति बन गया। अंततः हम 26 अप्रैल की सुबह लगभग 9:30 बजे (रूसी समयानुसार) रूस पहुँचे।

एयरपोर्ट से बाहर निकलते ही हममें से कई लोगों ने अपने जीवन में पहली बार बर्फबारी का अनुभव किया। अपने चारों ओर गिरती बर्फ को देखकर हमारे रोंगटे खड़े हो गए। वह क्षण किसी सपने जैसा अवास्तविक और अद्भुत प्रतीत हो रहा था। GITIS की तृतीय वर्ष

की एक छात्रा मारिया ने हमारा स्वागत किया और हमें होटल तक पहुँचने में सहायता की।

मेरे होटल के कमरे की खिड़की से मॉस्को की सड़कों पर गिरती बर्फ और वहाँ की सुंदर स्थापत्य कला से सुसज्जित इमारतें दिखाई दे रही थीं। पूरा दृश्य किसी सिनेमाई और जादुई दुनिया जैसा लग रहा था।

उस रात लगभग 12:30 बजे हम पाँच लोग पैदल मॉस्को घूमने के लिए बाहर निकले। जैसे ही हमने चलना शुरू किया, हमें वहाँ के दैनिक जीवन में कई भिन्नताएँ दिखाई देने लगीं – लोग सड़क पर पूरी तरह दाईं ओर चलते थे और सड़कों को ऊपर से सीधे पार नहीं किया जाता था। पैदल यात्री भूमिगत सबवे मार्गों का उपयोग करते थे।

बर्फबारी इतनी हो रही थी कि थोड़ी ही देर में हमारी जैकेटें बर्फ से ढक गईं, क्योंकि हम छाते या रेनकोट की चिंता किए बिना उस अनुभव के उत्साह में डूबे हुए थे। हम मॉस्को की शांत सड़कों और छोटी गलियों में लगभग तीन घंटे तक घूमते रहे और फिर आधी रात के बाद होटल लौटे।

अगली सुबह, 27 अप्रैल को, मैं सुबह 6 बजे जल्दी उठकर रेड स्क्वायर और सेंट बेसिल कैथेड्रल देखने गया। रातभर हुई बर्फबारी ने सड़कों को सफेद चादर से ढक दिया था, और हाथ में गर्म कॉफी का कप लेकर वहाँ टहलना इस यात्रा के सबसे शांत और अविस्मरणीय क्षणों में से एक बन गया।

उसी दिन बाद में, हमने फेस्टिवल गतिविधियों के अंतर्गत प्रोफेसर अन्ना द्वारा आयोजित एक मास्टर क्लास में भाग लिया। सत्र समाप्त होने के बाद हम GITIS थिएटर देखने गए, जहाँ अगले दिन हमारी प्रस्तुति निर्धारित थी। प्रस्तुति स्थल को पहले से देखकर हमारे भीतर उत्साह के साथ–साथ हल्की घबराहट भी महसूस हो रही थी।

इसके बाद हम खरीदारी और स्मृति–चिह्न लेने के लिए इजमायलोव्स्की मार्केट गए। उसी दिन हमने पहली बार प्रसिद्ध मॉस्को मेट्रो का अनुभव भी किया। जहाँ भी हम जाते, अनुवाद करने वाले मोबाइल ऐप हमारे सबसे करीबी साथी बन जाते थे।

यहाँ तक कि मेट्रो टिकट खरीदना भी अपने आप में एक रोमांचक अनुभव बन गया। हमें पूरे सिस्टम को समझने में लगभग चालीस मिनट लग गए, और अंततः हमें पता चला कि चाहे हम कितने भी स्टेशन यात्रा करें, किराया समान ही रहता है।

हमने प्लोश्चाद रेवोल्यूत्सी मेट्रो स्टेशन पर स्थित प्रसिद्ध "गुड लक डॉग" की प्रतिमा भी देखी और अन्य लोगों की तरह उसके नाक को छूकर सौभाग्य की कामना की। होटल लौटने से पहले हमने अपने परिवार और मित्रों के लिए चॉकलेट्स और छोटे–छोटे उपहार भी खरीदे।

28 अप्रैल को हमारी यात्रा का सबसे महत्वपूर्ण दिन आखिरकार आ पहुँचा। सुबह–सुबह हमने अपने परिधान,

प्रॉप्स और प्रस्तुति से जुड़ी सभी सामग्रियाँ तैयार कीं और GITIS थिएटर पहुँचे।

रिहर्सल, लाइटिंग जाँच, साउंड चेक और मेकअप की तैयारियों के बाद शाम 7 बजे हमारी प्रस्तुति आरंभ हुई। रूसी दर्शकों के सामने "कर्मांकुश" का मंचन करना हमारे लिए अत्यंत भावनात्मक अनुभव था। दर्शकों में कुछ लोग हिंदी भी समझते थे और भारतीय शास्त्रीय नृत्य शैलियों, विशेषकर भरतनाट्यम, से परिचित थे। उनकी सराहना और प्रस्तुति के प्रति जुड़ाव ने उस क्षण को हमारे लिए और भी अधिक विशेष बना दिया।

29 अप्रैल को हमने GITIS थिएटर में एक और कार्यशाला में भाग लिया। यह वॉइस एक्सरसाइज सत्र कोसेन्को विक्टोरिया (Kosenko Victoria) द्वारा संचालित किया गया था। इस कार्यशाला के माध्यम से हमें स्वर प्रशिक्षण और प्रस्तुति की नई तकनीकों से परिचित होने का अवसर मिला। किसी दूसरी संस्कृति के कलाकार अभिनय और वोकल अभ्यास को किस प्रकार अपनाते हैं, यह देखना हम सभी के लिए एक महत्वपूर्ण शिक्षण अनुभव बन गया।

कार्यशाला के बाद हम दुब्रोव्का गए, और तब तक हम मॉस्को मेट्रो का उपयोग बिना किसी उलझन के सहजता से करने लगे थे।

लेकिन यह यात्रा केवल प्रस्तुतियों और कार्यशालाओं तक सीमित नहीं थी। मॉस्को स्वयं हमें एक जीवित रंगमंचीय इतिहास की पुस्तक जैसा प्रतीत होता था। शहर की सड़कों पर चलना, वहाँ की स्थापत्य कला को देखना, बर्फबारी का अनुभव करना, रूसी भोजन का स्वाद लेना, मेट्रो प्रणाली में यात्रा करना और विभिन्न संस्कृतियों के लोगों से संवाद करना– इन सबने हमारी यात्रा के प्रत्येक दिन को यादगार बना दिया।

एक बात का हमें आज भी खेद है कि मॉस्को देर से पहुँचने के कारण हम फेस्टिवल में भाग लेने वाले अन्य अंतर्राष्ट्रीय छात्र समूहों की प्रस्तुतियाँ नहीं देख सके। यदि हमें पूरे फ़ेस्टिवल में सम्मिलित होने का अवसर मिलता, तो यह अनुभव और भी अधिक समृद्ध तथा प्रेरणादायक बन सकता था।

फिर भी, रूस की यह यात्रा हमारे लिए केवल एक रंगमंचीय भ्रमण बनकर नहीं रही। यह एक सांस्कृतिक आदान–प्रदान, सीखने का महत्वपूर्ण अनुभव और एक ऐसी सुंदर स्मृति बन गई, जिसे हम अपनी कलात्मक यात्रा में सदैव संजोकर रखेंगे। दिल्ली से मॉस्को तक की इस यात्रा ने हमें यह एहसास कराया कि रंगमंच किस प्रकार भाषाओं, देशों और संस्कृतियों की सीमाओं को पार कर लोगों को आपस में जोड़ सकता है।

सम्पर्क सूत्र : श्री निलय दे,
छात्र (द्वितीय वर्ष), एन.एस.डी.
E-mail: niloyd446@gmail.com

शौर्य का प्रथम सूर्योदय

श्री बिजेन्द्र सिंह चौहान

सुनो हिमालय के शिखरों तुम, ओ सूरज ओ चंदा सुन लो!
सुप्त पड़ी थी जो सदियों से, उस भारत की व्यथा सुन लो!
व्यापारी बन कर आए थे, सत्ता के वो क्रूर लुटेरे,
कूटनीति के पाश बिछा कर, डाले थे भारत में डेरे।
हड़प नीतियाँ डलहौजी की, हर घर में आग लगाती थीं,
लूट–खसोट की वे आंधियाँ, माटी का खून सुखाती थीं।
भारत का पौरुष ही समय का, ऐसा चक्र घुमाएगा,
खोया हुआ जो गौरव अपना, वापस लौट के आएगा।

मातृभूमि के दीवानों ने, रण की नई बिसात रची,
गांव–गांव में 'कमल, रोटियां', ले जाने की हलचल मची।
कुशाल सिंह और रानो बापू, गुप्त योजना बना चुके,
आजादी की वेदी पर सब, अपना शीश चढ़ा चुके।
उस चर्बी वाले कारतूस का, वीरों ने बहिष्कार किया,
क्रांतिकारी मंगल पांडे ने, पहला सिंह–हुंकार किया।
हर योद्धा का यह संकल्प ही, नया सवेरा लाएगा,
खोया हुआ जो गौरव अपना, वापस लौट के आएगा।

धन सिंह गुर्जर के नारों से, मेरठ में भूचाल उठा था,
सैनिक का वो वेश त्याग कर, हर बागी महाकाल उठा था।
राजा नाहर सिंह ने रण में, वीरों सा अभिमान रखा,
फांसी के फंदे को चूमा, भारत का सम्मान रखा।
जनरल बख्त खान ने दिल्ली में, गोरों को चुन–चुन मारा,
रणबांकुरे वीरों ने भी, दिया देश को संबल प्यारा।
यह महासमर ही फिरंगियों का, सारा दंभ मिटाएगा,
खोया हुआ जो गौरव अपना, वापस लौट के आएगा।

कानपुर में नाना साहब का, ऐसा शंखनाद हुआ,
तात्या टोपे की तलवारों से, दुश्मन बर्बाद हुआ।
रण में चंडी का रूप धार, गोरों की जिसने नींव हिलाई,
झाँसी की स्वाभिमानी रानी, मनु जो लक्ष्मीबाई कहलाई।
दत्तक पुत्र पीठ पर बांधे, दोनों हाथों में शमशीरें,
मार रही थी हर दुश्मन को, तोड़ रही थी सब जंजीरें।
उस वीरांगना का शौर्य ही, सबको भान कराएगा,
खोया हुआ जो गौरव अपना, वापस लौट के आएगा।

बिहार के बाबू कुंवर सिंह, उम्र थी अस्सी पार मगर,
बूढ़े शेर की दहाड़ सुन कर, थर–थर कांपे गांव–नगर।
राव तुलाराम रणभूमि में, बन कर के तूफान अड़े,
सिख सरदार बाबा राम सिंह, गोरों से रण बीच लड़े।
वीर हुकमचंद, मुनीर बेग ने, रण में अद्भुत शौर्य दिखाया,
अपनी धरती की रक्षा में, मस्तक कभी नहीं झुकाया।
इन अमर शहीदों की गाथा, कण–कण अब गाएगा,
खोया हुआ जो गौरव अपना, वापस लौट के आएगा।

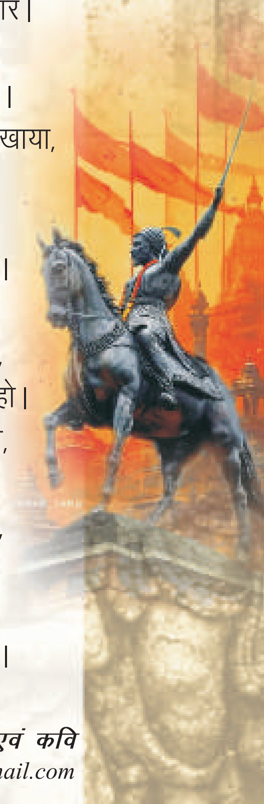

अरे आज के नौजवानों, तुम उन वीरों की संतान हो,
मिटे जो देश की खातिर, तुम शहीदों का अभिमान हो।
याद रहे वो मंगल, तात्या, रानी और कुंवर की गाथा,
गर्व से ऊँचा रहे हमेशा, भारत माता का यह माथा।
इस माटी की कसम हर कोई, अपना फर्ज निभाएगा,
कहे कवि देश का यौवन, नव–इतिहास रचाएगा।
हर नौजवां अदम्य साहस से, परचम नया फहराएगा,
खोया हुआ जो गौरव अपना, वापस लौट के आएगा।

सम्पर्क सूत्रः श्री बिजेन्द्र सिंह चौहान, लेखक एवं कवि
E-mail: bijender1935@gmail.com

सुदर्शन चक्र:
दिव्य शक्ति और न्याय का प्रतीक

सुदर्शन चक्र हिंदू धर्म में भगवान विष्णु का एक अत्यंत शक्तिशाली और प्रसिद्ध आयुध (शस्त्र) है। यह एक घूर्णनशील चक्र (डिस्क) है, जो अत्यधिक तेज और अद्भुत गति से घूमता है, और जिसके बारे में मान्यता है कि यह अपने लक्ष्य को बिना चूके भेदता है तथा वापस लौट आता है। सुदर्शन चक्र न केवल एक अस्त्र है, बल्कि यह धर्म, न्याय और सत्य की रक्षा का प्रतीक भी है।

सुदर्शन चक्र का वर्णन

सुदर्शन चक्र का आकार गोल होता है, जिसके किनारे अत्यंत तीक्ष्ण होते हैं। इसका व्यास लगभग एक गज (लगभग तीन फीट) बताया गया है। यह चक्र इतना तेज होता है कि इसकी गति की तुलना प्रकाश की गति से की जाती है। इसे भगवान विष्णु की उंगलियों में घूमते हुए चित्रित किया जाता है, विशेष रूप से उनकी दाहिनी तर्जनी (इंडेक्स फिंगर) में।

सृजन और प्राप्ति की कथा

पुराणों के अनुसार, सुदर्शन चक्र का निर्माण विश्वकर्मा ने किया था। किंवदंती है कि भगवान शिव ने इसे भगवान विष्णु को प्रदान किया था, जब विष्णु ने घोर तपस्या करके उन्हें प्रसन्न किया। एक अन्य कथा के अनुसार, यह चक्र दैत्य गुरु शुक्राचार्य द्वारा बनाई गई एक दिव्य ऊर्जा से उत्पन्न हुआ था, जिसे विश्वकर्मा ने आकार दिया।

धार्मिक और आध्यात्मिक महत्व

सुदर्शन चक्र केवल युद्ध का शस्त्र नहीं, बल्कि आध्यात्मिक दृष्टि से भी अत्यंत महत्वपूर्ण है। यह बुराई के विनाश, अधर्म का नाश और धर्म की स्थापना का प्रतीक माना जाता है। यही कारण है कि जब भी सुदर्शन चक्र का प्रयोग होता है, तो वह अन्याय, पाप और राक्षसी प्रवृत्तियों के विनाश के लिए ही होता है।

उल्लेखनीय प्रसंग

महाभारत में भगवान कृष्ण ने शिशुपाल वध के समय सुदर्शन चक्र का प्रयोग किया था। शिशुपाल ने बार–बार भगवान कृष्ण का अपमान किया, और जब उसकी उद्दंडता सीमाओं को पार कर गई, तब भगवान ने सुदर्शन चक्र से उसका वध किया।

एक और प्रमुख प्रसंग रामायण में मिलता है, जब भगवान विष्णु के अवतार श्रीराम के काल में यह चक्र निष्क्रिय था, क्योंकि वह उस समय मनुष्य रूप में थे।

आधुनिक प्रतीकात्मकता

आज भी सुदर्शन चक्र को कई भारतीय प्रतीकों में स्थान प्राप्त है। भारतीय ध्वज में स्थित 'अशोक चक्र' भी सुदर्शन चक्र से प्रेरित माना जाता है, जो निरंतर गति, प्रगति और धर्म के चक्र का प्रतीक है। यह धर्म की रक्षा तथा अधर्म के विनाश का प्रतीक है।

पौराणिक कथाओं के अनुसार इसकी गति अत्यंत तीव्र है और यह लक्ष्य का भेदन करके पुनः अपने स्वामी के पास लौट आता है।

सुदर्शन चक्र शक्ति, न्याय, संरक्षण और दैवी सामर्थ्य का प्रतीक माना जाता है। सुदर्शन चक्र को कालचक्र का भी प्रतीक माना जाता है, जो समय की निरंतर गति को दर्शाता है। यह सत्य, धर्म और मर्यादा की रक्षा के लिए दैवी शक्ति के रूप में प्रतिष्ठित है।

कुछ क़लम से, कुछ कैमरे से

रूपसज्जा का एक दृश्यः सुश्री सिया
एन.एस.डी. छात्र

गढ़वाल का एक दृश्यः सुश्री खुशी आचार्य
एन.एस.डी. छात्र

थेरूकुट्टु प्रस्तुतिः
श्री माहेश्वर पवार, एन.एस.डी. छात्र

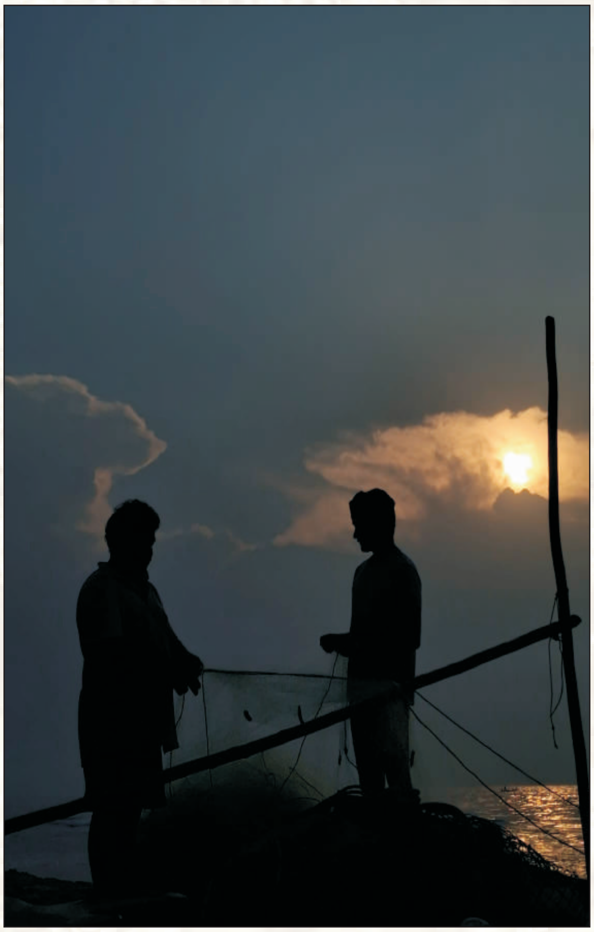

माया बीच, पांडिचेरी, तमिलनाडुः
सुश्री संजुक्ता, एन.एस.डी. छात्र

कुछ क़लम से, कुछ कैमरे से

सूर्यास्त का एक दृश्यः
श्री अभय दत्त बाजपेयी, एन.एस.डी. छात्र

द्रोणागिरी, उत्तराखण्डः
श्री शुभम, एन.एस.डी. छात्र

भुटाकोला उत्सव, कुडिग्राम, कर्नाटकः
सुश्री रचना, एन.एस.डी. छात्र

नैमिषारण्य चक्र तीर्थ का एक दृश्य, उत्तर प्रदेशः
श्री संजय गोपी

कुछ कलम से, कुछ कैमरे से

श्री ताड़ेकश्वर मंदिर, उत्तराखंड
सुश्री पार्वती बिष्ट

हुमायूँ का मकबरा
श्री नितीश, एन.एस.डी. छात्र

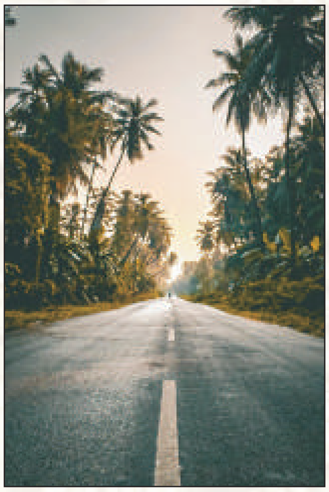

गोवा का एक दृश्यः
सुश्री कशिश शर्मा

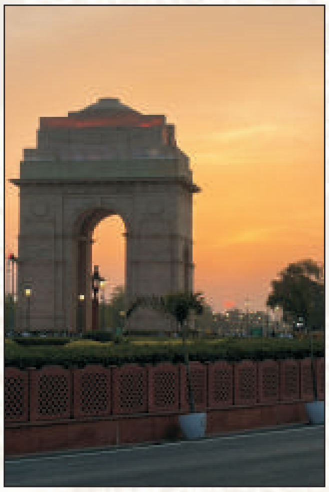

इंडिया गेट पर सुनहरा पलः
श्रीकांत कमलेकर, एन.एस.डी. छात्र

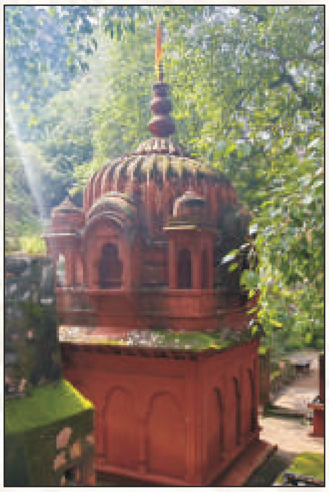

शिव मंदिर, झाँसी–रानी लक्ष्मी बाई का
पूजन स्थलः सुश्री कविता मिश्रा

असम की नीली शामः
श्री सत्यम कुशवाहा, एन.एस.डी. छात्र

जहाँ नदी जीवन को सहारा देती हैः
श्री निलय दे, एन.एस.डी. छात्र

राजभाषा गतिविधियाँ

वाचन कला विचारों, भावनाओं और ज्ञान को प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत करने की एक महत्वपूर्ण कला है। यह केवल शब्दों को पढ़ना नहीं, बल्कि उनके भाव, अर्थ और संदेश को श्रोताओं तक पहुँचाना भी है। उचित उच्चारण, स्वर, गति और विराम वाचन को आकर्षक बनाते हैं। वाचन कला से आत्मविश्वास, भाषा–कौशल और अभिव्यक्ति क्षमता का विकास होता है। शिक्षा, साहित्य और सांस्कृतिक कार्यक्रमों में इसका विशेष महत्व है। इसी उद्देश्य से राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय के राजभाषा विभाग द्वारा दिनांक 17 मार्च 2026 को "वाचन कलाः एक प्रभावपूर्ण शैली" विषय पर कार्यशाला का आयोजन किया गया। कार्यशाला में कार्यशाला विशेषज्ञ के रूप में आमंत्रित श्री अजय कुमार ने कार्यशाला को संगीत से सजाते हुए उपरोक्त विषय पर सभी प्रतिभागियों को व्यावहारिक रूप से जानकारी दी।

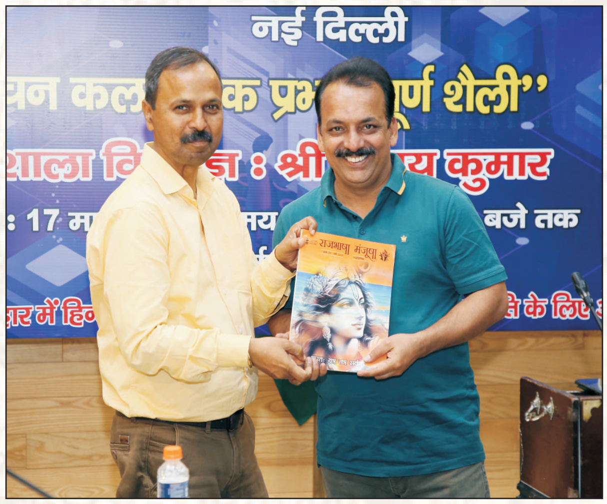

राजभाषा ई-टूल्स के प्रकार

(राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय द्वारा विकसित राजभाषा कार्यान्वयन के लिए महत्त्वपूर्ण जानकारी)

- भारती बहुभाषी अनुवाद सारथी (मशीन अनुवाद प्रणाली) - अंग्रेजी से हिंदी एवं अन्य भारतीय भाषाओं में अनुवाद सुविधा ।

- हिंदी शब्दसिंधु -पारंपरिक, प्रशासनिक और विभिन्न तकनीकी विषयों के शब्दों सहित सात लाख से अधिक शब्दों का डिजिटल शब्दकोश। https://hindishabdsindhu-rajbhasha-gov-in/

- राजभाषा पोर्टल - हिंदी संबंधी नियम, अधिनियम, परिपत्र एवं सामग्री का ऑनलाइन मंच।

- ई-लर्निंग एवं हिंदी प्रशिक्षण मॉड्यूल - हिंदी सीखने और अभ्यास के ऑनलाइन पाठ्यक्रम।

- ऑनलाइन हिंदी परीक्षा प्रणाली - हिंदी प्रवीणता एवं प्रशिक्षण परीक्षाओं हेतु डिजिटल प्लेटफॉर्म।

- राजभाषा प्रगति रिपोर्ट प्रणाली - कार्यालयों की तिमाही प्रगति रिपोर्ट ऑनलाइन भरने की सुविधा।

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद्दुःखभाग्भवेत्॥

अर्थः

सभी सुखी हों, सभी रोगमुक्त रहें,
सभी शुभ देखें और कोई भी दुःख का भागी न बने।

यह श्लोक भारतीय संस्कृति की
सार्वभौमिक कल्याण भावना को दर्शाता है।

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः॥

अर्थः

यह पृथ्वी मेरी माता है और मैं उसका पुत्र हूँ।
भारतीय संस्कृति में प्रकृति और
धरती के प्रति आदर का यह अद्भुत भाव है।